ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 06 अगस्त 2017 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 06 अगस्त 2017 से 12 अगस्त 2017

श्रा. शु. – 14 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 83, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

हंसराज कॉलेज का 70वां स्थापना दिवस समारोह

''हंसराज जैसा शैक्षणिक माहौल और कहीं नहीं'' कहा श्री किरेन रिजीजू ने

दिल्ली विश्वविद्यालय के हंसराज कॉलेज के 70वें स्थापना दिवस समारोह का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में डीएवी कॉलेज मैनेजिंग कमेटी के अध्यक्ष पद्मश्री डॉ. पूनम सूरी, कोषाध्यक्ष श्रीदीप ओम चारी के साथ तिब्बत के प्रधानमंत्री डॉ. लोबसंग सांगे तथा भारत सरकार के गृह राज्यमंत्री श्री किरेन रिजीजू तथा कॉलेज के चेयरमेन श्री प्रबोध महाजन उपस्थित थे। श्री किरेन रिजीजू ने अपने वक्तव्य में कॉलेज के दिनों को याद करते हुए हंसराज कालेज की सांस्कृतिक व शैक्षिक वैशिष्ट्य पर विस्तार से अपने विचार व्यक्त किए। उन्होंने कहा कि हंसराज जैसा शैक्षणिक माहौल अन्य किसी कॉलेज में नहीं है। इस कॉलेज को देश का अग्रणी संस्थान बताते हुए उन्होंने कहा कि मैं देश और दुनिया की महत्वपूर्ण संस्थाओं की यात्राएं करता रहता हूँ और हर जगह हमें हंसराज कॉलेज के पूर्व विद्यार्थी मिलते हैं जो अपने काम से अलग ही पहचाने जाते हैं। युवाओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि यह तीन वर्ष आपके लिए गोल्डन पीरियड है इसका सार्थक उपयोग करते हुए देश के निर्माण में अपनी भूमिका निभाएं। उन्होंने यह सीख दी कि कोई भी कार्य छोटा बड़ा नहीं होता। कॉलेज के समय को इंजॉय करते हुए अपने दायित्व का निर्वहन करना बड़ी बात है। उन्होंने इस बात को रेखांकित किया कि व्यक्ति की सफलता उसके पद से नहीं प्रदर्शन से तय होती है।

तिब्बत के प्रधानमंत्री डॉ. लोबसंगे सांगे ने हंसराज कॉलेज की महत्वपूर्ण भूमिका मानते हुए कहा कि हंसराज कॉलेज सिर्फ शिक्षा नहीं देता बल्कि व्यक्ति को कुछ बड़ा करने के लिए प्रेरित भी करता है। सांगे ने अपने छात्र जीवन का संकेत करते हुए विद्यार्थियों से कहा कि जब मेरे जैसा औसत विद्यार्थी यहाँ तक पहुंच सकता है तो आपसे और भी अधिक उम्मीद है। डॉ. सांगे ने कहा कि वे भारत की लोकतान्त्रिक व्यवस्था तथा अहिंसा को आदर्श मानते हैं। भारत और चीन में फर्क करते हुए उन्होंने कहा कि भारत लोकतंत्र की रक्षा करते हुए विकास की बात करता है जबकि चीन लोकतंत्र को मारकर विकास का मार्ग अपनाता है। भारत की प्राचीन शिक्षा व्यवस्था के संदर्भ में नालंदा और तक्षशिला विश्वविद्यालय को याद करते हुए उन्होंने उसकी गरिमामयी परंपरा का भी महिमा मंडन किया।

डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी के चेयरमैन डॉ. पूनम सूरी ने विभिन्न लोककथाओं द्वारा विद्यार्थियों को जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हुए कहा कि जीवन में नकारात्मक भाव न आने दें और बड़े सपने देखें तथा उसे पूरा करने के लिए योजनाबद्ध तरीके से मेहनत करें।

इस अवसर पर हंसराज कॉलेज द्वारा अपने पूर्व छात्रों, शिक्षकों एवं नॉन–टीचिंग स्टाफ सहित 34 लोगों को विभिन्न सम्मानों से सम्मानित किया गया। हंसराज कॉलेज ने अपने तीन पूर्व छात्रों श्री किरेन रिजीजू, गृह राज्यमंत्री, भारत सरकार, डॉ. लोबसंग सांगे, प्रधानमंत्री तिब्बत केन्द्रीय प्रशासन, श्री प्रबोध महाजन, चेयरमैन, हंसराज कॉलेज को 'महात्मा हंसराज रत्न सम्मान' तथा दस पूर्व छात्रों– 'महात्मा हंसराज गौरव सम्मान' से सम्मानित किया गया। इसके साथ ही 30 वर्षो से भी अधिक समय से कार्यरत दस शिक्षकों को 'महात्मा हंसराज शिक्षा रत्न सम्मान' तथा नॉनन्टीचिंग के दस सस्दयों को 'महात्मा हंसराज विशिष्ट सेवा सम्मान' से सम्मानित किया गया।

हंसराज कॉलेज के 70वें स्थापना दिवस पर 'पद्मश्री डॉ. एस. के. सामा डे केयर सेंटर (क्रेच)', 'जस्टिस मेहरचंद महाजन शूटिंग रेंज', लैंग्वेज लैब एवं मीडिया सेंटर' का उद्घाटन भी किया गया। समारोह का आरम्भ कॉलेज स्थित यज्ञशाला में आयोजित हवन से हुआ। कॉलेज प्रबंध समिति के कोषाध्यक्ष श्रीदीप ओमचारी जी ने समारोह के अंत में आगत अथितियों को धन्यवाद किया और डॉ. मोना भटनागर ने समारोह को सफल बनाने में सहयोग देने वाले सभी लोगों का आभार व्यक्त किया।

आर्य युवा समाज के तत्वावधान में एम.आर.ए.डी.ए.वी. सोलन में रक्तदान शिविर का आयोजन

आर्य युवा समाज हिमाचल प्रदेश के तत्वावधान में विद्यालय की प्रधानाचार्या अनुपमा शर्मा के मार्गदर्शन में रक्तदान शिविर का कार्य सम्पन्न हुआ। इस कार्यक्रम में जोनल अस्पताल सोलन से डॉक्टर स्मिता व अन्य सहायक चिकित्सक मौजूद रहे। उन्होंने आये हुए लोगों का रक्त जांचा और रक्त को महादान बताया।

इस शिविर में लगभग 800 लोग रक्तदान करने के लिए उपस्थित थे।

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 06 अगस्त 2017 से 12 अगस्त 2017

बड़े-छोटे सबको नमः

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः।
यजाम देवान् यदि शक्नवाम, मा ज्यायसः शंसमा वृक्षि देवाः।।

ऋग् 1.27.13

ऋषिः **आजीगर्तिः शुनः शेषः**। देवता **विश्वेदेवाः**। छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**महद् भ्यः नमः**) [ज्ञान और गुणों में] महानों को नमः (**अर्भकेभ्यः नमः**) छोटों को नमः, (**युवभ्यः नमः**) युवकों को नमः, (**आशिनेभ्यः नमः**) वयोवृद्धों को नमः। (**यदि शक्नवाम**) जहाँ तक [हम] समर्थ हों (**देवान्**) विद्वानों को (**यजाम**) सत्कृत करें। (**देवाः**) हे विद्वानों! (**ज्यायसः**) अपने से बड़े के (**शंसं**) स्तवन को [मैं] (**मा आवृक्षि**) न छोड़ूँ।

●मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे अन्यों के प्रति अभिवादन आदि उचित शिष्टाचार का पालन करना होता है। मैं भी बड़े छोटे सबको अभिवादन करता हूँ; कृत्रिम और दिखावटी नहीं, किन्तु अन्तर्मन से 'नमः' करता हूँ। 'नमः' का मूल अर्थ है झुकना। झुकना सिर से भी होता है, मन से भी। राजा, राज्याधिकारी, माता, पिता, गुरु, अतिथि, साधु, संन्यासी, शिशु, कुमार, विद्यार्थी, युवक, वृद्ध, स्वामी, सेवक प्रत्येक से मिलने पर हृदय में जो आदर, श्रद्धा, प्रेम, आशीर्वाद आदि के भाव उत्पन्न होते हैं, वे सब 'नमः' के अन्दर समाविष्ट हैं। अतः अभिवादन के लिए वैदिक 'नमस्ते' शब्द अत्यन्त हृदय-ग्राही और उपयुक्त है। जब छोटे बड़े को 'नमस्ते' कहने में पारस्परिक सौहार्द और एक-दूसरे की उन्नति की कामना व्यक्त होती है। साथ ही 'नमः' में केवल शुभकामना ही नहीं, प्रत्युत बड़े-छोटे सबके प्रति कर्तव्य-पालन का भाव भी निहित है।

हे राष्ट्र के विद्यावृद्ध और गुणवृद्ध महान् नर-नारियों! हे उपदेशामृत-वर्षा से जनता को तृप्त करनेवाले वीतराग संन्यासियो! हे विद्वच्छिरोमणि तपोनिष्ठ वानप्रस्थ आचार्यो! हे देश के लिए प्राणों का उत्सर्ग करने को उद्यत महावीरों! हे जनता-जनार्दन की सेवा में तत्पर महापुरूषों! 'तुम्हें नमः'। हे निश्छल भावभंगियों और बाल-क्रीड़ाओं से मन को मुदित करने वाले अबोध शिशुओं! हे अल्पवयस्क कुमारो! हे गुरु के अधीन विद्याध्ययन में रत तपस्वी, व्रती ब्रह्मचारियों! तुम्हें 'नमः'। हे अपने संकल्प-बल से भूमि आकाश को झुका देनेवाले बली, साहसी, ओजस्वी, विजयी युवको! तुम्हें 'नमः'। हे परिपक्व, धीर, गम्भीर, अनुभवी, धन्य, वन्दनीय, वयोवृद्ध जनो! तुम्हें 'नमः'।

समस्त बालक, युवक, वृद्ध मेरे अर्चनीय देव हैं। जहाँ तक सम्भव होगा, मैं इन्हें स्नेह-सत्कार दूँगा, इनकी सेवा करूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा कि जो मुझसे बड़े हैं, उनकी शंसना में, उनके उपकार के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन में मुझसे कोई त्रुटि न हो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

अमृत-पान

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में अच्छे की मित्रता के संदर्भ में स्वामी जी ने बताया कि जिस प्रकार दूध और पानी की मित्रता होती है ठीक इसी प्रकार का प्रेम और मित्रता का रिश्ता ईश्वर और जीव में है। जो लोग मित्र पहचानने वाले मित्र के साथ जोड़ते हैं, परममित्र परमात्मा का दर्शन कराने वाले वेद से जो प्रेम की लगन लगाते हैं, वेद और ईश्वर उसको अपना भक्त बना लेते हैं और मित्र बनाकर प्रत्येक क्षण उसके अंग संग रहते हैं। जिस मनुष्य का मित्र वेद और ईश्वर है, उसे संसार में न योक रहता है, न मोह और उसके सब क्लेश मिट जाते हैं।

आज के आर्य विनाश लाने वाली सम्पत्ति तो बच्चों को उत्तराधिकार में दे देते हैं, परन्तु आर्य धर्म की सम्पत्ति उन्हें नहीं देते। आर्य माता-पिता आज इस पर विचार करें और अपने बच्चों को आर्य धर्म के कोश से वंचित करके इन्हें आध्यात्मिक कंगाल न बनाएँ। सांसारिक निर्धनता निःसन्देह कष्ट देती है, परन्तु आध्यात्मिक कंगाली ऐसा गिराती है कि फिर मनुष्य को कहीं का नहीं रखती।

आगे पढ़ेंगे दो लघु कथायें

मनुष्य हैं या पत्थर की मूर्तियाँ

सरपट घोड़ा दौड़ाते-दौड़ाते थककर और चूर होकर सवार ने ग्राम से बाहर एक सुन्दर घनी छाँव देखी और घोड़े से उतरकर वहीं विश्राम करने लगा। एक-दो घण्टे व्यतीत हो गए। सवार की थकावट कुछ दूर हो चुकी थी। पसीना भी सूख चुका था। शरीर में कुछ नवजीवन का सञ्चार होता प्रतीत होता था। इतने में उसने देखा कि सामने से सुन्दर मन्दिर में लोग झुण्ड-के-झुण्ड इकट्ठे हो रहे हैं। सवार अपने स्थान से उठा और मन्दिर की ओर चल पड़ा। अन्दर प्रविष्ट हुआ और पूछा-"आज यहाँ क्या हो रहा है?"

उत्तर मिला, इस स्थान पर प्रतिदिन कथा हुआ करती है। लोग कथा सुनने के लिए एकत्र हो रहे हैं।

सवार ने भी कथा सुनने का मन बनाकर घोड़े को वृक्ष के साथ बाँध दिया और एक कोने में चुपचाप बैठकर कथा सुनने लगा।

आज का विषय "वैराग्य" था। कथा करने वाले की आवाज़ हृदय को लुभानेवाली और कथा करने का ढंग मनोहारी था। सबसे बढ़कर शास्त्र के वचन हृदय पर प्रभाव करनेवाले थे। कथा हो रही थी-"संसार में असंख्य दुःख हैं। इन दुखों से बचने का उपाय केवल वैराग्य है। जो लोग अपने जीवन को संसार के धन्धों में नष्ट कर देते हैं, उन्हें आगामी जन्म में न सुन्दर मुखमण्डल, न प्यारी-प्यारी आँखें, न सोचने-समझनेवाला मस्तिष्क, न ही विद्या पढ़ने की शक्ति और न ही सर्वश्रेष्ठ प्राणी होने का अधिकार दिया जाता है। ऐसे लोगों को ऐसे कारागारों में बन्द कर दिया जाता है, जिनकी शक्लें व सूरतें भौंडी और घृणित होती हैं। किसी की थूथनी होती है। किसी की चार टाँगें होती हैं; किसी की सहस्रों, किसी की होती नहीं। इनकी दृष्टि नीची कर दी जाती है। शर्म के कारण इन्हें गर्दन ऊँचा करने का साहस नहीं होता। इसी प्रकार इनका श्रेष्ठ जीवन घृणित जीवन में परिवर्तित हो जाता है। इसलिए हे दुनियावालो! हे संसार के धन्धों में फँसे हुए लोगों! क्षण-क्षण में परमात्मा के नाम का स्मरण करो। सदा 'ओम्' का जाप करते रहो। कैसा है यह जप? कल्याण का एक मंदिर है। श्वास का कुछ भरोसा न रख। जो श्वास तूने बाहर भेज दिया, क्या जाने फिर आ सके या न आ सके। बस, इसी समय 'ओम्' का जाप आरम्भ कर दे। हृदय में वैराग्य पैदा कर और संसार के धन्धों से बच।"

सवार ने इस वैराग्य उत्पन्न करनेवाले उपदेश को सुना। कथा समाप्त हुई। सवार भी उठा। बाहर आया। अपना सारा सामान उसी समय लोगों में बाँट दिया। घोड़ा भी एक लूले-लङ्गड़े को दान में दे दिया। स्वयं एक चादर शरीर पर ओढ़े वैरागी बनकर आगे चल पड़ा।

वैरागी सवार इसी प्रकार वर्षों घूमता रहा। ईश्वरभक्ति में अपना बहुमूल्य समय लगाता रहा। तपस्या के द्वारा अपने मन को वश में करता रहा और फिर लोगों को ईश्वरभक्ति का उपदेश देता रहा।

होते-होते बारह वर्ष व्यतीत हो गए। वही ऋतु थी। गर्मी के दिन थे। वैरागी सवार उसी गाँव की ओर, जहाँ उसे वैराग्य का उपदेश मिला था, आ निकला। मन्दिर के निकट वैसी ही मनोहारी छाया थी। मन्दिर भी उसी प्रकार बना हुआ था। वैरागी सवार ने देखा, लोग उसी प्रकार मन्दिर में जा रहे हैं। भीड़-भाड़ पर्याप्त है।

वैरागी साधु चकित था। हैं! बारह वर्ष के पश्चात् भी वैसी ही भीड़-भाड़। एक व्यक्ति को पकड़कर पूछा- "क्योंजी! यहाँ मन्दिर

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

वेद प्रचार सप्ताह मनाने का स्रोत वेद

● आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

वेद ज्ञान धरती का प्रकाशस्तम्भ है। यह ज्ञान समस्त कार्य, विधि, विधानों का आधार है। वेद ही सुख शांति, ज्ञान विज्ञान, आचार-विचार, धर्म, कर्म आदि का प्रज्ञान देता है। वेद ज्ञान से सबका हित व कल्याण होता है। पृथिवी में कल्याण सभी के लिए आवश्यक है। वह कल्याण सभी को प्राप्त हो। इसके लिए वेद का पठन-पाठन, श्रवण-श्रावण, प्रचार-प्रसार भी उतना ही अनिवार्य एवं आवश्यक है। वेद का निर्देश है-

मिमीही श्लोकमास्ये पर्जन्य इव ततनः।
गाय गायत्रमुक्थ्यम्।।

ऋ. 1/38/14।।

इस मन्त्र का अर्थ करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं-

हे विद्वान मनुष्य! **तू आस्ये** = अपने मुख में, **श्लोकम्** = वेद की शिक्षा से युक्त वाणी को (**श्लोक इति वाङ्नाम** निघ. 1/11, **शलोकृ संघाते, श्लोकः = छन्दोबद्ध वाणी**), **मिमीही**-निर्माण कर और उस वाणी को, **पर्जन्य इव** = जैसे मेघ वृष्टि करता है, वैसे **ततनः** = फैला और, **उक्थ्यम्** = कहने योग्य, **गायत्रं** = गायत्री छन्द वाले स्त्रोत रूप वैदिक सूक्तों को, **गाय** = पढ़ तथा पढ़ा।

दया.भा.ऋ. 1/38/14।।

महर्षि दयानन्द के मन्त्रार्थ से स्पष्ट है वेद का प्रचार-प्रसार करना अति महत्वपूर्ण है, मनुष्य का नैतिक कर्तव्य है।

वेद मन्त्र में **श्लोकम्** पद वेदवाणी के लिए आया है। वेदवाणी कैसे फैलायी जाये, इसके लिए **पर्जन्यः** मेघ की उपमा दी गई है। **पर्जन्यः इव ततनः** = जैसे पर्जन्यः = मेघ वर्षा जल को चहुँदिक् फैलाता है, वैसे ही हम, **आस्ये** = मुहँ में भर कर वेदवाणी को, **मिमीहि** = फैलाने का कार्य करें।

वेद प्रचार सप्ताह मनाने का आदिस्रोत

आर्य समाज में श्रावणी पूर्णिमा के पश्चात् **वेद प्रचार सप्ताह** मनाया जाता है। **आर्य समाज की इस रीति का आदिस्रोत यह वेदमन्त्र ही है।** इस मंत्र में यह निर्दिष्ट नहीं है कि वेद प्रचार सप्ताह **वर्षा ऋतु के भाद्रपद मास** से ही हो। वेद मंत्र के अनुसार तो वेद प्रचार **प्रति मास, अहर्निश का कार्य है।**

वर्षा ऋतु व वेद प्रचार सप्ताह

इस मन्त्र में जैसे वेदवाणी को **पर्जन्यः इव**= मेघ के समान फैलाने की उपमा दी गई है, वैसे ही अन्यत्र **अथर्ववेद** में भी वेदवाणी को फैलाने के लिए **पर्जन्य** की उपमा देते हुए कहा है-

संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः।
वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूका अवादिषुः।।

अथर्व. 4/15/13।।

अर्थात् **संवत्सरम्**=वर्ष पर्यन्त, **शशयानाः**=सोते हुए, **मण्डूकाः**= मेंढक, **पर्जन्यजिन्विताम्**=मेघों को बढ़ाने वाली, **वाचम्**=वाणी को वर्षाऋतु में, **प्र अवादिषुः**=उच्चारित करते हैं, वैसे ही, **व्रतचारिणः** = ब्रह्मचर्य व कर्त्तव्य व्रत में रत, **ब्राह्मणाः**=वेद का पठन-पाठन करने वाले वेदों का उच्चारण करते हैं।

मन्त्र का तात्पर्य स्पष्ट है कि वेद को पठन-पाठन इतने जोर शोर से करना चाहिए जैसे वर्षा ऋतु में मेंढक अपनी टरटर ध्वनि से आकाश को भर देते हैं।

अथर्ववेद के इन मंत्रों में **पर्जन्यः** उपमा के साथ-साथ **मण्डूकाः** पद भी उपमा के लिए आया है। **इन उपमा स्रोतों के आधार से वर्षा ऋतु में ही आर्यसमाज में वेद प्रचार सप्ताह का आयोजन होता आ रहा है।**

वेदों के कल्याणकारी उपदेश

वेद निर्दिष्ट कल्याणकारी उपदेशों में जीवन सुखी, समृद्ध, सानन्द होवे, एतदर्थ वेद में अनेक आचरणीय उपदेश हैं। उनके आचरण से सभी का जीवन उत्तम बनता है। वेद सब के लिए पठनीय है। वेद के उपदेश अनेक दुर्गुणों से बचाते हैं यथा-

ईर्ष्या की दुर्गति से बचना

दुःख अशान्ति के कारणों में एक कारण **ईर्ष्या** भी है। ईर्ष्या एक रोग है। ईर्ष्या मनुष्य की दुर्गति कर देती है। ईर्ष्या रोग से प्रायः मनुष्य ग्रस्त है। ईर्ष्या की दुर्गति का स्वरूप निर्दिष्ट करते हुए **अथर्ववेद** में कहा है-

यथा भूमिर्मृतमना मृतान्मृतमनस्तरा।
यथोत मम्रुषो मन एवेर्ष्योर्मृतं मनः।।

अथर्व.6/18/2।।

अर्थात् **यथा**=जैसे, **भूमिः**=पृथिवी, **मृतमना**=मरे मन वाली है, **मृतात्**= मरे हुए की अपेक्षा भी, **मृतमनस्तरा**= अतिशय रूप से, अत्यधिक मरे मन मन वाली है। **उत**= और, **यथा** = जैसे, मरणासन्न का, **मनः**= मर मरा होता है, **एव**= इसी प्रकार, **ईर्ष्योः**=ईर्ष्यालु का, **मनः**=मन, **मृतम्**=मृत हो जाता है, मर जाता है।

मन्त्र का आशय है भूमि पर सभी के द्वारा मल मूत्र किया जाता है, उसे चीरा फाड़ा भी जाता है, पर वह इतनी मृत होती है कि प्रतिक्रिया करने में नितान्त असमर्थ रहती है, चीखती, चिल्लाती नहीं। वह **मृतमना, मृतमनस्तरा** ही है। मरे हुए व्यक्ति का मन भी विचारों से नितान्त शून्य हो जाता है। मरणासन्न व्यक्ति का भी मन मर जाता है, किञ्चिदपि जान, पहचान, विचार नहीं कर पाता। ऐसे ही **ईर्ष्या** करने वाले व्यक्ति का मन मनन शक्ति खो बैठता है। कर्त्तव्य अकर्त्तव्य, विचार, विवेक नहीं रह जाता, आहार विहार सब दूषित हो जाते हैं। अन्न, मांस में उसके लिए कोई भेद नहीं रहता? ईर्ष्या में व्यक्ति अन्दर ही अन्दर घुलता रहता है, सूख जाता है। शांति चली जाती है, मन अशांत हो जाता है। उसके कार्य अन्यथा सिद्ध होते हैं। भीतर ही भीतर जलता रहता है। ईर्ष्या की अग्नि की धधक से सम्बन्ध नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। वह बदले की भावना से चिन्ता में पड़ा रहता है। **वेद पढ़ने-पढ़ाने से ही ईर्ष्या की दुर्गति से बचा जा सकता है। ईर्ष्या त्याज्य है, वह वेद ही निर्दिष्ट करता है।**

क्रोध से बचना

मनुष्य जब क्रोधाविष्ट होता है तो बुद्धि का वैभव समाप्त हो जाता है। बुद्धि नष्ट हो जाती है। नाशक क्रोध का निषेधक वेद सन्देश है-

मा क्रुधः। अथर्व. 11/2/20।।

ऐ मनुष्य! क्रोध न कर।

मन्त्र का आशय है क्रोध विनाश करने वाला है। क्रोध मनुष्य की बुद्धि, विवेक को नष्ट ही नहीं करता, उसका अधोपतन करता है। क्रोध और विवेक **अहिनकुलम्** = नेवला व सांप सदृश हैं। जहाँ क्रोध होगा, वहाँ विवेक नहीं हो सकता। विवेकशून्य व्यक्ति धैर्य, शान्ति, कर्त्तव्य, अकर्त्तव्य सब भूल जाता है। धैर्य, शांति रहित व्यक्ति उचित अनुचित का विचार नहीं कर पाता।

क्रोध की राक्षसी वृत्ति मनुष्य को मनुष्य नहीं रहने देते। क्रोधी व्यक्ति अपने आत्मीय जनों पर भी शस्त्र उठा बैठता है, उन्हें काट डालता है। अतः वेद में कहा-**मा क्रुधः**, क्रोध मत कर। क्रोध मत करो यह शिक्षा वेद के पढ़ने सुनने पर ही प्राप्त हो सकती है।

क्रोधी व्यक्ति का साथ न किया जाये, ऐसा भी वेद का आदेश है-

अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपारणे।
इमं रातं सुतं पिब।।

ऋ.8/32/21।।

अर्थात् **मन्युषाविणं** = क्रोधाविष्ट व्यक्ति से, **उपारणे सुषुवांसम्** = गमनागमन के स्थान पर सोने वाले व्यक्ति से, **अतीहि** = दूर रहो, **इमं सुतम्** = इस ऐश्वर्यशाली, **रातम्** = दीयमान वेदज्ञान को, **पिब** = ग्रहण करो।

मन्त्र का तात्पर्य है क्रोधी व प्रमत्त घूमने वाले व्यक्ति से सदा दूर रहें। उनका सामीप्य घातक है, उनका साहचर्य ग्रहण न करें। क्रोधी से बचने का संकल्प वेदाध्ययन से ही उद्‌बुद्ध होता है। एतदर्थ वेद का पठन-पाठन श्रवण-श्रावण अनिवार्य है।

पाप से बचना

मनुष्य जाने अनजाने शरीर से पाप कर ही देता है। पाप व्यक्ति को निन्दा, घृणा की जंजीरों से जकड़ देता है, अतः वेद का उपदेश है-

मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये।
मा नो रीरधतं निदे।। ऋ. 7/94/3।।

अर्थात् **पापत्वाय** = पाप के लिये, **नः नरः** = हमारे मनुष्य, **मा**= प्रवृत्त न हो, **अभिशस्तये** = चुगली प कपट के लिये, **मा** = न प्रवृत्त हो, **रीरधतम्** = बार-बार सिद्ध किये हुए घृणास्पद पाप, **नः** = हमें, **निदे मा** = निन्दनीय न बनावे।

मन्त्र से स्पष्ट होता है पाप दुःखदायी है, बड़ा ही क्लेशकारक है। पाप करने वाला निन्दा का पात्र होता है। छली, कपटी समझा जाता है। पापी व्यक्ति भेड़िये के सदृश हो जाता है, सुखों के लिए दौड़ता ही रहता है, पर सुख नहीं मिलता। पापी को ठहरने का कोई स्थान नहीं। पापी से समाज के लोग घृणा, नफरत करते हैं। समाज उसे बहिष्कृत कर देता है। पाप से बचने का वेद ही उपाय बताता है, अतः वेद स्वाध्याय आवश्यक है।

इस प्रकार वेद में सुख, शांति कल्याण के अनेक संदेश हैं, इस बार इतना ही। वेद प्रचार सप्ताह के माध्यम से जीवन के उत्थान के सम्बल जानने योग्य है। वेद निर्दिष्ट ज्ञान से ही कल्याण, सुख, आनन्द प्राप्त होना सुनिश्चित है।

आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज,
सिरोही-307027

उपनयन संस्कार

● डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री

अर्थ– उपनयन का शाब्दिक अर्थ है– उप–समीप, नयन–ले जाना। विद्याध्ययन के लिए गुरु या आचार्य के समीप ले जाने को उपनयन कहा जाता है। उपनयन का अर्थ है– गुरु के समीप जाना। विद्याध्ययन के दिन से ही गुरु तथा शिष्य का एक–दूसरे के निकट होना।

उपनयन के बाद बालक द्विज कहलाता है। द्विज का अर्थ है जिसका दूसरा जन्म हो। माता–पिता से तो पहला जन्म होता है, परन्तु इस जन्म के बाद जब बालक संस्कृति की भट्ठी में पड़कर नवीन मानव होने की प्रक्रिया में पड़ जाता है, तब उस बालक का दूसरा जन्म कहा जाता है। शास्त्रों में कहा गया है– **''जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते।''**(स्कन्द पुराण, नागर खण्ड, अध्याय 239, श्लोक 31) जन्म से तो सभी शूद्र पैदा होते हैं, संस्कारों से ही मनुष्य द्विज बनता है। संस्कृत में शिष्य के लिए एक अत्यन्त सार्थक शब्द प्रयुक्त होता है– 'अन्तेवासी'। अन्तेवासी का अर्थ है –जो गुरु के अन्दर बसा हो। उपनयन संस्कार करते हुए गुरु शिष्य को कितना अपने अन्तरतम में ले जाता है यह भाव अथर्ववेद से प्रकट होता है–

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।
तं रात्रीस्तिस्त्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः।। (अथर्ववेद 11/5/3)

अर्थात् बालक को शिक्षा देने के लिए स्वीकार करते हुए गुरु उसे इस प्रकार सुरक्षित सँभालकर रखता है जैसे माता पुत्र को गर्भ में सुरक्षित तथा सँभालकर रखती है।

उपनयन का काल– उपनयन संस्कार में मुख्य कर्म यज्ञोपवीत धारण करना है। यज्ञोपवीत धारण करना गृह्यसूत्रों के अनुसार, ब्राह्मण बालक का आठवें वर्ष में, क्षत्रिय का ग्यारहवें वर्ष में तथा वैश्य का बारहवें वर्ष में होना चाहिए। (**अष्टमे वर्षे ब्राह्मणमुपनयेत्** (आश्वलायन गृह्यसूत्र 1।19।1), **एकादशे क्षत्रियम्** (आ. गृ.सू. 1।19। 3), **द्वादशे वैश्यम्** (आ.गृ. सू. 1।19।4)।

ब्राह्मण का सोलह वर्ष तक, क्षत्रिय का बाइस वर्ष तक तथा वैश्य का चौबीस वर्ष तक यज्ञोपवीत (उपनयन) संस्कार हो जाना चाहिए। (आषोडशाद् ब्राह्मणास्यानतीतकालः (आ.गृ.सू. 1/19/5)। **आद्वाविंशात् क्षत्रियस्य, आचतुर्विंशाद् वैश्वस्य अत ऊर्ध्व पतितसावित्रीका भवन्ति।** (आ.गृ.सू. 1/19/6)। उपनयन संस्कार की यह अपर सीमा है।

विधि– संस्कारविधिः के अनुसार जिस दिन बालक का यज्ञोपवीत करना हो उससे 3 तीन दिन या 1एक दिन पूर्व ब्राह्मण का लड़का एक बार या अनेक बार सिर्फ दुग्धपान करे, क्षत्रिय का लड़का जौ का दलिया खाएँ और वैश्य का लड़का केवल श्रीखंड खाए। इसके लिए स्वामीजी ने शतपथ ब्राह्मण का उल्लेख किया है, जहाँ कहा है–

'' पयोव्रतो ब्राह्मणो यवागूव्रतो राजन्य आमिक्षाव्रतो वैश्यः। (मूलतः यह वचन पतञ्जलिकृत 'महाभाष्यम्' (पस्पशाह्निक) में मिलता है।)

जब–जब लड़कों को भूख लगे तब–तब तीनों वर्णों के लड़के अपने–अपने नियत पदार्थों का सेवन करें, अन्य कोई पदार्थ न खाएँ। उपनयन संस्कार के समय बालक आचार्य के समीप जाकर कहता है– ''ब्रह्मचर्य–मागाम्, ब्रह्माचार्यसानि'' (पारस्कर गृह्यसूत्र 2/2/6) – मैं ब्रह्मचर्य के जीवन में दीक्षित होने के लिए, ब्रह्मचारी बनने के लिए, हे भगवन्! आपके पास आया हूँ, आप ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि मैं ब्रह्मचारी बन जाऊँ। तब आचार्य उसे वस्त्र, उपवस्त्र धारण कराता है और कहता है कि जिस (आलंकारिक) रूप में देवताओं के आचार्य बृहस्पति ने इन्द्र को ज्ञापरूपी अमृत–वस्त्र धारण कराता हूँ। तुझे वस्त्र उस ज्ञान तथा ब्रह्मचर्य–जीवन के प्रतीक हैं जिनसे तुझे दीर्घ आयु प्राप्त होगी, बल मिलेगा, तेज मिलेगा। (**येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम्। तेन त्वां परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे।। (पा. गृ.सू. 2/2/7)**

बालक के द्वारा व्रत पालन की प्रतिज्ञा

उपनयन के समय आचार्य उससे पूछ सकता है क्या तुम जो कुछ पाने के लिए आए हो उसके लिए दृढ़ निश्चय कर आए हो। बालक के मन में कोई दुविधा न रहे इसी कारण वह अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र तथा व्रतों के पति परमात्मा के नाम से शपथ खाता है कि मैं ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करते हुए उसे निभाने में समर्थ होऊँ (**त्च्छकेयम्**) । इस प्रकार सभ्य समाज के सम्मुख उपनयन संस्कार के अवसर पर ब्रह्मचर्य व्रत को ग्रहण करने का पाँच बार दोहराना बालक को आत्मबल देता है और वह इस व्रत को सफलतापूर्वक निभाने का प्रयत्न करता है। साथ ही मेरा यह व्रत झूठा साबित न हो जाए। '**इदमहं अनृतात् सत्यमुपैमि**' – मैं झूठा न बनूँ, सत्यप्रतिज्ञ सिद्ध होऊँ– यदि कभी व्रत–भंग की कमजोरी सामने आए, उस समय मेरी आत्मा मुझे धिक्कार कर अनृत से सत्य मार्ग पर डाल दे। विद्यार्थी के व्रत करने के बाद आचार्य पूर्वाभिमुख बैठकर विद्यार्थी की उन्नति के लिए संकल्प करता है कि मेरे समीप आने वाले विद्यार्थी के साथ मेरा सदा सम्बन्ध बना रहे (**आगन्त्रा समगन्महि**); यह कभी मेरी आखों से ओझल न हो, मानव सुलभ कमजोरियों से यह बालक युद्ध करता रहे (**मर्त्यं सुप्रयुयोतन**), हम दोनों इस प्रेममय, हिंसा रहित पर्यावरण में साथ–साथ विचरण करें (**अरिष्टाः संचरेमहि**) और यह बालक मेरे पास कल्याण को प्राप्त करे (**स्वस्ति चरतात् अयम्**)।

जलाञ्जलि मोक्षण और सूर्यावलोकन

जब बालक तथा आचार्य व्रत तथा संकल्प के द्वारा एक दूसरे के साथ पिता–पुत्र के भाव में बँध जाते हैं, तब आचार्य अपनी अंजलि में जल भरकर शिष्य की जल–भरी अंजलि में छोड़ता है, और शिष्य की अंजलि में जल आ जाने पर उस अंजलि को अंगुष्ठ सहित पकड़कर उसमें भरे जल को पृथ्वी पर छोड़ देता है। यह प्रक्रिया तीन बार की जाती है। इसके बाद आचार्य शिष्य को बाहर ले जाकर सूर्य के दर्शन कराता है।

सूर्य–दर्शन के बाद बालक आचार्य की प्रदक्षिणा करके उसके सम्मुख बैठ जाता है तब आचार्य उसके दाएँ कंधे को स्पर्श करता है, उदर तथा हृदय को स्पर्श करता है और बालक की मंगल कामना करता है। आचार्य कहता है– बालक को मुझे क्या सौंपा गया है, उसे मानो विश्व का निर्माण करने वाली सब शक्तियों के प्रति सौंपा गया है– मैं विश्व की सब शक्तियों की सहायता से इसे संसार का उत्तम मानव बनाने का संकल्प करता हूँ।

शैक्षिक महत्त्व

उपनयन संस्कार शिक्षा के मन्दिर में प्रवेश करने का द्वार है, इस द्वार से प्रविष्ट होकर विद्या का जो अध्ययन किया जाता है वह वेदारम्भ संस्कार कहाता है। जिनका निश्चित समय पर उपनयन संस्कार नहीं होता था उसे पतित माना जाता था– 'अत ऊर्ध्वं पतितसावित्रीका भवन्ति।' इससे स्पष्ट है जो लोग सन्तान को सुसंस्कृत, गुणवान् बनाना चाहते हैं उनकी सन्तान का उपनयन जल्दी से जल्दी होना चाहिए। तभी मनु ने उपनयन का समय गृह्यसूत्रों के निर्दिष्ट समय से भी पहले निश्चित किया है। मनुस्मृति में लिखा है–

ब्रह्मवर्चस्कामस्य कार्यं विप्रस्य पंचमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे।। (मनुस्मृति 2/37)

ऋषि दयानन्द मनुस्मृति का उक्त उद्धरण देकर लिखते हैं कि 'जिसको शीघ्र विद्या, बल और व्यवहार करने की इच्छा हो और बालक भी पढ़ने में समर्थ हुए हों तो ब्राह्मण के लड़के का जन्म वा गर्भ से पाँचवें, क्षत्रिय के लड़के का जन्म व गर्भ से छठे और वैश्य के लड़के का जन्म व गर्भ से आठवें वर्ष में यज्ञोपवीत करें। (संस्कारविधिः, पृ. 107/108) संस्कारों के बिना मनुष्य, मनुष्य नहीं बन सकता। यह सर्वविदित है कि सँखिया जैसे विष को संस्कारों की भावना देकर अमृत तुल्य बना दिया जाता है, जंगली खूँखार शेर को संस्कारों द्वारा बकरी के साथ एक घाट पर पानी पिला दिया जाता है।

माता और आचार्य की समानता

उपनयन संस्कार का अभिप्राय यह है कि अब तक माता–पिता अपने परिश्रम से बालक के जीवन पर ऐसे संस्कार डाल रहे थे जिनसे वह इस जन्म के संस्कारो के कारण नव–मानव बन सके, अब वे उसे आचार्य के पास लाने का श्रीगणेश करने वाले हैं। जिससे आचार्य (जिसका काम ही बच्चों को नया जीवन देना है, उन्हें नये साँचे में ढालना है) बच्चे के जीवन को उसकी प्रवृत्तियों के अनुसार एक नई दिशा दे सके। बालक को शिक्षा देने के लिए स्वीकार करते हुए गुरु उसे इस प्रकार सुरक्षित संभालकर रखता है जैसे माता पुत्र को अपने गर्भ में सुरक्षित तथा संभाल कर रखती है। मातृगर्भ में जैसे शिशु सुरक्षित रहता है उसी प्रकार आचार्य कुल में विद्यार्थी दूषित वातावरण से प्रभावित होने से बचा रहता है। क्या गुरु शिष्य के सम्बन्ध का इससे ऊँचा चित्र खींचा जा सकता है? माता भोजन करती है, गर्भ भोजन नहीं करता, परन्तु माता के साँस में उसका साँस, माता के भोजन में उसका भोजन, माता के जलपान में उसका जलपान है। गुरु तथा शिष्य के निकटतम सम्बन्ध को समझाने के लिए माता तथा गर्भ के सम्बन्ध से अधिक सुन्दर क्या उपमा दी जा सकती है। (संस्कार चन्द्रिका– डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, पृ. 254)

तीन ऋणों से मुक्ति

मनुष्य उत्पन्न होते ही तीन ऋणों का ऋणी है। ('जायमानो वै ब्राह्मणस्त्रिभिः ऋणवां जायते। **ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यः, यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्यः' (तैत्तिरीय संहिता 6/3/104)**

1. ऋषिऋण 2. पितृऋण 3. देवऋण।

इन तीनों ऋणों को चुकाने के लिए ही उपनयन संस्कार किया जाता है तथा यज्ञोपवीत पहनाया जाता है।

(क) **ऋषिऋण**– समाज में ऋषि लोगों ने अपने ज्ञान–विज्ञान का परिचय प्राप्त कर हमें ज्ञान दिया। अगर उनके पास ज्ञान न

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

महर्षि, सत्यार्थ प्रकाश और मैं

● अभिमन्यु कुमार खुल्लर

विश्व–रत्न, विश्व–वंद्य महर्षि दयानन्द कृत 'सत्यार्थ–प्रकाश' के भावार्थों को समझना और आत्मसात् करना जब पं. गुरुदत्त विद्यार्थी के लिये भी टेढ़ी खीर था तब सामान्य बुद्धि के वैदिक–धर्मी, आर्यसमाजी के लिये कितना दुर्बोध्य होगा, अनुमान लगाया जा सकता है। पं. गुरुदत्त ने स्वामी श्रद्धानन्द से तब कहा था, जब वह स्वामी श्रद्धानन्द नहीं हुए थे–मुंशीराम! सत्यार्थ–प्रकाश का 17 बार अध्ययन करने के पश्चात् भी, जब–जब सत्यार्थ–प्रकाश का आलोड़न करता हूँ, तब–तब मुझे नए–नए अर्थ उद्भासित होते हैं। इस प्रसंग में विद्वान लोग इससे अधिक कुछ नहीं बताते। किन प्रसंगों के सम्बन्ध में नए भाव, नए विचार पं. गुरुदत्त के मस्तिष्क में उद्भासित होते थे, इसकी चर्चा कभी नहीं सुनी और नहीं कोई लेख दृष्टिगोचर हुआ। सत्यार्थ–प्रकाश की संस्कृत व्याख्या के अध्ययन के परिणाम स्वरूप ही वह महर्षि के अन्तस्थल की भावधारा में गोता लगा पाए। पं. लेखराम ने पृष्ठ 913 में इसकी पुष्टि की है। महर्षि के वैदूष्य ने इसी कारण उन्हें अचम्भित कर दिया था। सम्भवतः पं. गुरुदत्त ही कभी बताते लेकिन 25 वर्ष की अल्पायु में ही उनका स्वर्गवास हो गया।

सत्यार्थ–प्रकाश को ज्ञान–विज्ञान का अनुपम आगार, मानव–कल्याण की विश्वजनीन भावना से ओतप्रोत, भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति की चेष्टा को मुखरित करने वाला आधार स्तम्भ, समस्त सामाजिक कुरीतियों, बुराइयों, को उन्मूलन करने वाला शंखनाद आदि मानने वाले पं. गुरुदत्त विद्यार्थी का यह कथन हमारा प्रेरणा–स्रोत होना चाहिए और हमें सदैव स्मरण रखना चाहिए– 'यदि सत्यार्थ–प्रकाश की एक प्रति का मूल्य एक हजार रुपये भी होता तो मैं उसे सारी सम्पत्ति बेचकर खरीदता।' 150 वर्ष पूर्व सत्यार्थ–प्रकाश का मूल्य पांच रुपये था और वह उसे सारी सम्पत्ति बेचकर भी खरीदने को समद्युत थे।

सत्यार्थ प्रकाश के मर्म समझने–समझाने का दायित्व विद्वानों का है और वे दायित्व का निर्वाह कर भी रहे हैं। स्वामी विद्यानन्द सरस्वती जी ने 'सत्यार्थ–भास्कर' नाम से दो हजार से भी अधिक पृष्ठों में सत्यार्थ–प्रकाश की व्याख्या लिखी है। यह अद्वितीय ग्रन्थ है।

पं. गुरुदत्त विद्यार्थी से लेख का प्रारम्भ इसलिए किया था कि सम्पूर्ण रूप में सत्यार्थ प्रकाश को समझना व आत्मसात करना बहुत टेढ़ी खीर है। पहले पं. गुरुदत्त ने अजमेर जाकर मृत्यु शैया पर आसीन विष की दारुण पीड़ा को अत्यधिक धैर्य व शान्ति से सहन करते हुए महर्षि दयानन्द का अत्यन्त सूक्ष्मता से, गहराई से अवलोकन किया। ईश्वर–विश्वासी योगी के स्वर्गारोहण ने, ईश्वर के अस्तित्व को लेकर द्विविधाग्रस्त पं. गुरुदत्त को सर्वप्रथम ईश्वर विश्वासी बनाया फिर सत्यार्थ–प्रकाश का गूढ़ अध्येता–दीवाना बना दिया।

वेद को अपौरुषेय (परमात्मा द्वारा प्रदत्त ज्ञान) मानने वाले महर्षि दयानन्द, वेद ज्ञान को समस्त मानवता की निधि मान कर ही उसकी व्याख्या प्रवचनों में, शास्त्रार्थों में और ग्रन्थों के प्रणयन में करते थे। इसीलिए, मेरी दृष्टि में, मानव–निर्माण की 'सत्यार्थ प्रकाश' और 'संस्कार विधि' में वर्णित वैदिक व्यवस्था केवल भारत के लिए ही नहीं है, वह विश्व के समस्त मानव समुदाय के लिए, समान रूप से उपयोगी है, आवश्यक है। इसके अन्तर्गत ऐसे श्रेष्ठ मानसिक और शारीरिक शक्तियों से सम्पन्न सबल, उज्ज्वल, निष्कलंक, चरित्रवान, सकारात्मक सोच वाले व्यक्तियों के निर्माण की व्यवस्था है जो विश्व में व्याप्त अशान्ति के कारणों को चाहे वे धर्म–पंथ आधारित हों, राजनैतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए हों, या विश्व–अर्थ व्यवस्था को अपनी मुट्ठी में कर मानव को कुचलने की नीयत से हों, सर्वांग रूप में समाप्त कर विश्व में शान्ति और सौमनस्य निर्माण करने में सफल हों। यह उल्लेख काल्पनिक नहीं है। वैदिक युगीन भारतीय सम्राट यह कर चुके हैं। इस मानव निर्माण प्रक्रिया का उल्लेख यथा स्थान किया जाएगा। भारत इसके लिये रॉल मॉडल बन सकता है।

इस दृष्टि के अनुरूप सर्वप्रथम भारत का नव निर्माण महर्षि को अभीष्ट था क्योंकि दासता की जंजीरों में जकड़ा भारत, अपनी अस्मिता ही खो बैठा था। अशिक्षा, कुसंस्कारों, अन्धविश्वासों में आकर डूबे हुए भारत में, असंख्य देवी–देवताओं की पूजा–पद्धति प्रचलित थी।

महर्षि का अनुभव जन्य सुविचारित अभिमत था कि वेदोक्त, ईश्वर की उपासना के बिना, अज्ञान, अन्धकार में आकण्ठ डूबे हुए भारत के कल्याण का श्रीगणेश भी नहीं किया जा सकता, इसीलिए प्रथम समुल्लास (आनन्द) में ईश्वर के सौ नामों की व्याख्या की है। प्रायः इन्ही सौ नामों से सम्पूर्ण भारत में ईश्वरोपासना होती है। महर्षि ने पहले सिद्ध किया कि ईश्वर का निज नाम (personal name) ओ३म् है। नोट–14 अप्रैल 2017 के टाइम्स ऑफ इण्डिया, ग्वालियर संस्करण में प्रकाशित समाचार के अनुसार विश्व विख्यात उस्ताद फैयाज़ वासिफ़ उद्दीन डागर ने कहा कि शास्त्रीय संगीत सर्वत्र व्याप्त है और मेरे लिए सब कुछ है। हमारा शरीर प्राकृतिक वाद्ययंत्र है और विश्व की समस्त ध्वनियों और स्वरों का मेल 'ओ३म्' में समाहित है। वे ध्रुपद गायन की बीसवीं पीढ़ी के गायक हैं। ध्रुपद का शुद्ध रूप ध्रुवपद है और उत्पत्ति सामवेद है। कन्याकुमारी स्थित स्वामी विवेकानन्द के ध्यान केन्द्र में 'ओ३म्' ध्वनि गुंजित होती रहती है।

ईश्वर का निज नाम ओ३म् है, शेष नाम, नाम नहीं उसके गुण हैं, विशेषण हैं। ये विशेषण पृथक–पृथक देवताओं की या अनेक ईश्वर की सिद्धि नहीं करते। संस्कृत की जिन धातुओं से इन शब्दों की उत्पत्ति हुई है, उनका उल्लेख करते हुए महर्षि अंकित करते हैं–

1. सम्पूर्ण जगत को रच कर बढ़ाता है, इसलिए परमेश्वर का नाम –'ब्रह्मा' है।

2. चर और अचर रूप जगत में व्यापक होने से परमात्मा का नाम 'विष्णु' है।

3. सब चराचर जगत को देखना, चिह्नित करता अर्थात् दृश्य बनाता, जैसे शरीर के नेत्र, नासिका, और वृक्ष के पत्र, पुष्प, फल–मूल, जल रक्त के लाल, श्वेत कण, मृत्तिका, पाषाण, चन्द्र, सूर्यादि चिह्न बनाता तथा सबको देखता, सब शोभाओं का लक्ष्य अर्थात् देखने योग्य है। इससे उस परमेश्वर का नाम 'लक्ष्मी' है।

4. उत्पत्ति और प्रलय से 'शेष' अर्थात् बच रहता है, इसलिए उस परमात्मा का नाम 'शेष' है।

टिप्पणी–इस प्रकार क्षीर सागर में शेष (नाग) शायी लक्ष्मीपति, विष्णु को ईश्वर मानकर पूजन करने का अर्थ 'शून्य' हो जाता है।

5. महान देवों का देव, अर्थात् विद्वानों का भी विद्वान, सूर्यादि पदार्थों का प्रकाशक है, इसलिए उस परमात्मा का नाम 'महादेव' है।

6. कल्याणस्वरूप और कल्याण करने वाला है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'शिव' है।

7. कल्याण अर्थात् सुख का करने वाला है, इससे उस परमेश्वर का नाम 'शंकर' है।

8. जो प्रकृत्यादि जड़ और सब जीव, प्रख्यात पदार्थों का स्वामी व पालन करने वाला है, इससे उस ईश्वर का नाम 'गणेश' व 'गणपति' है।

टिप्पणी– महादेव, शिव और शंकर एक ही हैं और कल्याण सूचक विशेषण हैं। महादेव को मृगछाला धारी, गले में सांप, जटा–जूट, चन्द्रमा का तिलक, त्रिशूलधारी पार्वती पति दिखाया जाता है जिसने अपने ही पुत्र गणेश का सिर काट दिया। कटे हुए सिर के स्थान पर हाथी का सूंड सहित लगा दिया गया।

गणपति की पूजा इसी रूप में प्रचालित हो गई और आज भी जोर–शोर से होती है। शिव के साथ तो और भी ज्यादा अत्याचार हुआ। वाममार्गियों ने योनि आकार के पात्र में लम्ब वल खड़े शिवलिंग की पूजा प्रारम्भ करा दी होगी या पुराण के किसी आख्यान में शिवलिंग की पूजा का प्रावधान होगा। यही पूजा आज भी चल रही है।

शिवलिंग पूजा का निषेध, वर्जित कराना बहुत ही दुसाध्य, जोखिमभरा काम था लेकिन महर्षि ने प्राणो की चिन्ता न करते हुए भी यह कार्य अत्यन्त कठोरता से किया। केवल महर्षि दयानन्द ही ऐसा कार्य कर सकते थे। कुछ उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ।

1 एक दिन जगन्नाथ मालवीय, छोटुगिरि गुसाई आदि सैकड़ों मनुष्य स्वामी जी के पास पहुँचे। छोटुगिरि आते ही स्वामी जी की जाँघ पर जाँघ मार कर बैठ गया, शेष खड़े रहे। स्वामी जी से कहा–बच्चा, अभी तक तुम कुछ पढ़ा नहीं, जाकर पढ़ो। इस बात को आप नहीं जानते कि जिस लिंग से सबकी उत्पत्ति होती है, उसका तुम खण्डन करते हो ओर शिवलिंग के समान हाथ बना कर एक श्लोक पढ़ा। स्वामीजी ने परिचय पूछा। जगन्नाथ मालवीय ने बताया कि जैसे काशी में विश्वनाथ है, उसी के समान मिर्जापुर में जो 'बूढ़े महादेव' है, यह उसके पुजारी हैं। स्वामी जी ने कहा–काशी में कौन विश्वनाथ है? विश्वनाथ तो विश्वभर में है, बनारस में तो 'पिण्डीनाथ' है। फिर जगन्नाथ मालवीय ने पूछा–आपका वास्तविक अभिप्राय क्या है? स्वामी जी ने कहा कि एक परमेश्वर की उपासना मैं मानता हूँ। और जड़ पाषाण आदि की बनाई हुई मूर्ति के पूजन का खण्डन करता हूँ। इस पर घोटूगिरि ने स्वामी जी के सिर पर हाथ फेरा और बोला बच्चा! तू नहीं जानता कि इसी लिंग ने तुझको उत्पन्न किया है। स्वामीजी ने कहा–तुम्हारी उत्पत्ति इस पाषाण के लिंग से हुई होगी, हम तो अपने माता–पिता से उत्पन्न हुए हैं।

2. स्वामी दयानन्द के ठहरने की व्यवस्था एक मन्दिर में की गई थी। स्वामीजी ने पूछा–किसका मन्दिर है। बताया गया शिव का। मन्दिर में शिव की मूर्ति है? उत्तर

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

गाड़ी का समय हो गया पर दरवाज़ा खुलने की आवाज़ नहीं आई

● स्व.श्री बलराज भल्ला

एक दिन जुलाई के आरम्भ में मुझे बतलाया गया कि मेरी माता जी का स्वास्थ्य अत्यन्त ही बिगड़ रहा है और वे मुझे देखने के लिए बड़ी ही उत्सुक हैं। ऐसा प्रतीत होता था कि उनकी ओर से एक तार जज साहिब के नाम भी आया हुआ था। मेरे वकील एक दिन की छुट्टी के लिए एक लाख व उससे अधिक की भी ज़मानत देने के लिए तैयार थे। शनिवार का दिन था। मैं उसी रात रवाना होकर रविवार के दिन लाहौर में रहकर सोमवार सुबह कचहरी में उपस्थित हो सकता था। जज साहिब ने बहुत देर के विचार के बाद पुलिस को आज्ञा दी कि उस रात मुझे लाहौर ले जाने का प्रबंध किया जाए। पुलिस ने काफी बहस के बाद, ऑबजैक्ट (आपत्ति) किया कि वे मुझे घर के अन्दर बिना हथकड़ी के नहीं जाने दे सकते और यदि मैं जंजीरों से बँधा हुआ अंदर जाऊँगा, तो मेरी माता को मुझे इस अवस्था में देख कर अतिदुःख होगा। संभव है, मेरी माता बीमारी की नाज़ुक हालत में मुझे ज़ंजीरों से बँधा हुआ देखने में असमर्थ हो। इसलिए पुलिस ने सलाह दी, मेरा लाहौर ले जाना ठीक न होगा। पंडित जी ने उसी समय तार द्वारा पूछा– ''क्या माता जी बलराज को हथकड़ियों में देखने के लिए प्रस्तुत हैं?'' हमारे कचहरी में बैठे–बैठे ही उतर आ गया– 'मृत्यु–शय्या पर लेटी हुई माता अपने पुत्र को किसी भी अवस्था में देखने के लिए प्रस्तुत हैं।' अब पुलिस को कोई बहाना न रहा और यह फैसला हो गया कि आज रात मुझे पुलिस लाहौर ले जाएगी। चार बज गए। कचहरी का समय खत्म हो गया। सब का ख्याल था मुझे आज जेल नहीं भेजा जाएगा। यहीं से 8 बजे की गाड़ी में चढ़ा दिया जाएगा। परन्तु उठते समय जज साहिब ने पंडित जी को कहा 'बलराज अब जेल में चला जाए।' मैंने जेल में प्रवेश किया। रोज की मानिन्द आज मेरा शरीर कोठरी में बंद हो गया, परन्तु मेरे विचार– मेरे विचारों को कौन–बंद कर सकता था? मेरे मन के वेग को कौन–सा दारोगा व सिपाही बाँध सकता था? मेरी आत्मा को, मेरे सूक्ष्म शरीर को, मेरी इच्छाओं के समूह को कौन–सा मनुष्य मुक्तावस्था से खींच कर बंधनों में डाल सकता था? मेरा स्थूल शरीर नौकरशाही के कर्मचारियों से बँधा हुआ 11 नंबर की खड्डी पर लेट रहा था। पर मेरा मन अनेक प्रकार के अवर्णनीय विचारों की प्रबल धारा पर बहता हुआ कहाँ रमण कर रहा था, नौकरशाही का कौन नौकर कह सकता था?

अनन्त विचारों में निमग्न समय व्यतीत होने लगा। जेल के घड़ियाल से उत्पन्न हुए वायु के चक्कर मेरे कानों के पदों के साथ टकरा–टकरा कर एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह, सात और आठ की प्रतिध्वनि उत्पन्न करने लगे। गाड़ी का समय व्यतीत हो गया। दरवाजा खुलने की ज़रा भी आवाज़ नहीं आयी। पुलिस किधर गयी? क्या यह सब स्वप्न था? क्या यह जज साहिब की पोचापाची थी? क्या गाड़ी ही देर से जाती है? ऐसे कई एक प्रश्न मन में उठ–उठ कर लीन होने लगे। धीरे–धीरे इस संसार को अंधकार ने आवृत कर लिया। धीरे–धीरे मन शिथिल पड़कर सच और झूठ में भेद करने में असमर्थ होने लगा। धीरे–धीरे दिल से एक अजीब धुआँ उठ–उठ कर दिमाग को ढकने लगा। धीरे–धीरे जागरूक अवस्था से मैं उस अवस्था में जाने लगा, जहाँ मनुष्य को संशय हो जाता है, वह जाग रहा है अथवा सो रहा है? जीवित है अथवा कालकराल के मुँह में पड़ कर अनन्त जीवन को प्राप्त कर चुका है?

किसी ने जंगला खड़खड़ाया और लैम्प की रोशनी मेरे मुँह पर फेंकी। मैं चौंक कर आँखें मलता हुआ उठ बैठा और सोचने लगा– 'क्या पुलिस मुझे लेने आयी है?'

देहली बम रहस्योद्घाटन से साभार

☞ पृष्ठ 02 का शेष

अमृत–पान ...

में क्या हो रहा है?"

मनुष्य– महाराज! कथा हो रही है।

वैरागी– यह कथा कब से हो रही है?

मनुष्य– भगवन्! आज कोई बीस वर्ष से हो रही है।

वैरागी– ये सुननेवाले कब से सुन रहे हैं?

मनुष्य– स्वामिन्! कोई बीस वर्ष से, कोई दस वर्ष से। कोई कम से, कोई अधिक से। इसी प्रकार से सुन रहे हैं।

वैरागी– क्या ये सुननेवाले जीवित लोग हैं, सचमुच के मनुष्य हैं अथवा पत्थर और लकड़ी की मूर्तियाँ हैं।

मनुष्य– नहीं महाराज! यह आप क्या कहते हैं?

वैरागी– क्या झूठ कहता हूँ। हमने तो इसी मन्दिर में इसी कथा करनेवाले से एक ही दिन कथा सुनी थी। शास्त्र की एक ही चाबुक लगी थी, परन्तु ये लोग विचित्र हैं, जो इतने समय से शास्त्र की चाबुकें खा रहे हैं और फिर भी इन्हें होश नहीं आती। ऐसी अवस्था में इन्हें मनुष्य समझें या पत्थर की मूर्तियाँ?

यह एक मनोरञ्जक कहानी हैं। जो अत्यन्त सुन्दरता से आर्यपुरुषों पर लागू होती है। आर्यपुरुष तनिक अवस्था देखें और बतलाएँ कि क्या वे सचमुच के मनुष्य हैं या पत्थर की मूर्तियाँ, क्योंकि वर्षों से आर्यसमाज में व्याख्यान, भाषण और उपदेश होते रहते हैं, परन्तु देखा यह जाता है कि न केवल नए आर्यभाई ही, अपितु पुराने–से–पुराने आर्यपुरुष भी उन पर आचरण करके दिखलाने का प्रयत्न नहीं करते। कई बार घोषणा हो चुकी है कि वृद्ध आर्यपुरुषों को अब संन्यास धारण करना चाहिए। वानप्रस्थी बनना चाहिए, परन्तु हाय रे सांसारिक धन्धों! तुम्हारा कल्याण हो जो इन वृद्धों के क़ान पर जूँ तक नहीं रेंगने देते।

क्या जानें संसार के धन्धे अधिक मीठे हैं, अधिक रसीले हैं, जो इन वृद्धों को जातिसेवा और ईश्वरभक्ति की ओर लगने ही नहीं देते अथवा इन धन्धों से पीड़ित, दुखित और क्लेशित होकर भी आजीवन क़ैदी की भाँति वे इस क़ैदखाने (कारागार) को छोड़ना नहीं चाहते। ये पक्तियाँ केवल और केवल वृद्ध आर्यपुरुषों के लिए लिखी गई हैं।

क्या वे इस बात का उत्तर देंगे कि क्या वे– **सचमुच के मनुष्य हैं या पत्थर की मूर्तियाँ।**

किसका सम्मान हुआ?

सरस्वती पण्डित की आवाज् सुरीली थी। उसकी वाणी में मिठास था और हृदय की गहराई तक पहुँचती थी। वहीं पण्डितजी नगर में कथा कर रहे थे। लोग झुण्ड–के–झुण्ड आते थे। एक धनिक सेठ भी फटे–पुराने वस्त्र पहनकर आता था और सबसे पीछे एक कोने में बैठ जाता। किसी ने कभी उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा। किसी ने उसे पूछा तक भी नहीं। इसी प्रकार दिन बीतते गए। सेठजी को कथा बहुत रुचिकर लगी। अगले दिन सेठजी अपने साथ दस रुपए ले–आया और कथा आरम्भ होने पर सरस्वती पण्डित के आगे दस रुपए चढ़ा दिए। चारों ओर से वाह! वाह!! की ध्वनि गूँज उठी। दूसरे दिन जब सेठ कथा में आया तो कोई कहने लगा– "सेठजी! इधर आ जाइए।" किसी ने कहा– "इधर पधार जाइए।" सरस्वती पण्डित बोले– "इधर आइए।"

सेठ को आश्चर्य हुआ। उसने कहा– "महाराज! पता चल गया कि जहाँ रुपया बोलता है, वहाँ सब चुप हो जाते हैं। मेरा विचार था कि केवल सांसारिक कार्यों में ही धन का मान–सम्मान होता है, परन्तु अब पता लग गया कि धर्म में भी इसका आदर–मान होता है। आज तक किसी ने मेरा–सम्मान नहीं किया। किसी ने फूटे मुँह से बुलाया तक नहीं। मैं आता था और अनजान व्यक्ति की भाँति पीछे बैठा रहता था। किसी से इतना भी न हो सका कि कोई मेरी राज़ी–खुशी पूछता और पूछता– "तुम कौन हो? कहाँ से कथा सुनने आते हो?" परन्तु अब देखिए, प्रत्येक व्यक्ति मेरा सम्मान कर रहा है। सभी अपने पास बिठाना चाहते हैं। यहाँ तक कि महाराज पण्डितजी भी अपने पास बुला रहे हैं। कहिए, यह धर्मस्थान में भी रुपए का मान नहीं तो और क्या है?"

सेठजी का ज़ोरदार भाषण सुनकर सब मौन हो गए। चुपके–चुपके सब कहने लगे– "सेठजी ने तो बड़ी बुरी झाड़ दी है।" कुछ देर तक इस प्रकार की कानाफूँसी होती रही। अन्ततः सरस्वती पण्डित ने मौन को भङ्ग किया औ कहने लगा– "सेठजी! यह आपने क्या समझ लिया? मान–सम्मान आपका नहीं हुआ। **आप तो वही हैं।** रुपया तो पहले भी आपके पास था। यह तो आपके **त्याग** का मान–सम्मान है। आज आपने दस रुपए का त्याग किया तो आपका मान–सम्मान बढ़ गया। यदि और त्याग करेंगे तो और आदर–सत्कार बढ़ जाएगा। स्मरण रखिए, मान–सम्मान धन का नहीं, अपितु उस त्याग का है।"

मान–सम्मान का पात्र बनने के लिए निःसन्देह धनिक होना आवश्यक है, परन्तु केवल धन मान–सम्मान नहीं दिलाता, प्रत्युत उसका त्याग मान–सम्मान दिलाता है। इससे आप समझ लीजिए कि किसका सम्मान हुआ? धन का या त्याग का?

.... क्रमशः

(पिछले अंक से आगे)

पर्यावरण संरक्षण यज्ञ

● वेद प्रकाश शास्त्री

ओ३म् यत्ते भूमे विश्वनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु। मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम् स्वाहा।।

अथर्व 12.1.35

हे भूमेः तेरा जो भी भाग मैं खोदूँ, वह पुनः शीघ्र ही उग आवे अर्थात् भर जाए! हे खोजने योग्य भूमि! मैं न तो मर्म स्थल पर चोट करूँ और न तेरे हृदय को पीड़ित करूँ।

ओ३म् उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः। दीर्घ न आयुः प्रति बुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृताः स्याम स्वाहा।।

अथर्व. 12.1.62

हे पृथिवि! तेरी गोद हमारे लिए नीरोग और राजरोग (टी.बी) रहित हो। अपनी आयु को दीर्घकाल तक जागृत करते हुए हम तेरे लिए बलिदान करने वाले बने रहें।

ओ३म् मा वो रिषत् खनिता यस्मै चाहं खनामि वः। द्विपाच् चतुष्पाद् अस्माकं सर्वमस्तु अनातुरं स्वाहा।। यजु. 12/95

हे औषधियों! आपका खोदने वाला मत हिंसित हो अर्थात् खुदाई के समय किसी प्रकार की चोट न आए अथवा खोदने वाला आपको हिंसित न करे अर्थात् तुम्हें जड़ से ही न उखाड़ दे अथवा काट दे। जिसके लिए मैं तुम्हें खोदता हूँ, वह हमारे दोपाए मनुष्य आदि

.... क्रमशः

4–E कैलाश नगर
फाजिल्का

☞ *पृष्ठ 04 का शेष*

उपनयन संस्कार...

होता तो हम निरे मूर्ख के मूर्ख रह जाते। वैसे हम भी ज्ञान प्राप्त कर समाज में आगे–आगे ज्ञान गंगा बहते रहने का प्रबन्ध करें। इस बात को यज्ञोपवीत का एक सूत्र हमें याद दिलाता है। ब्रह्मचर्याश्रम हमें ऋषि–ऋण से उऋण होने की याद दिलाता है।

(ख) पितृऋण– हमारे माता–पिता ने ब्रह्मचर्याश्रम समाप्त कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया और हमें उत्पन्न किया। यदि वे गृहस्थाश्रम में प्रवेश न करते, तब हमारा जन्म कैसे होता? इसी प्रकार हम ब्रह्मचर्याश्रम को समाप्त कर युवावस्था में प्रवेश कर समाज में उत्तम सन्तति प्रदान करें। जिससे समाज में पिता से पुत्र, पुत्र से पौत्र का सिलसिला बँधा रहे। यह कार्य गृहस्थाश्रम में ही होता है। इसलिए यज्ञोपवीत का दूसरा सूत्र हमें गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर पितृ–ऋण से उऋण होने की याद दिलाता है।

(ग) देवऋण– गृहस्थाश्रम को समाप्त कर हम समाज के भले के लिए उनकी सेवा के लिए वानप्रस्थ में प्रवेश करें, गृहस्थ में ही न फँसे रहें। इस बात को याद दिलाने के लिए यज्ञोपवीत का तीसरा सूत्र हमें समाज के दिव्य पुरुषों द्वारा हम पर छोड़े गए ऋण की तरफ इंगित करता रहता है।

उपनयन संस्कार में ब्राह्मण बनने की इच्छा रखने वाले बालक के लिए गोदुग्ध का सेवन इस बात का सूचक है कि उसे सात्विक वृत्ति का बनना है। क्षत्रिय बनने की इच्छा रखने वाले बालक को जौ के दलिया का सेवन करना चाहिए। क्योंकि अन्नों में जौ ताकत का सूचक है। वैश्य के लिए श्रीखंड का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि श्रीखंड– 'श्री'–लक्ष्मी के खण्ड का सूचक है। इन तीनों खाद्य पदार्थों का तीन या एक दिन देना उन द्वारा प्राप्त होने वाले सामर्थ्य का प्रतीक है।

जलाञ्जलि मोचन तथा सूर्यदर्शन का तात्पर्य

उपनयन संस्कार में आचार्य द्वारा अपनी अंजलि का जल बालक की अंजलि में तीन बार छोड़ना इस बात का द्योतक है कि आचार्य अपनी विद्या की जल–भरी अंजलि को शिष्य की जलाञ्जलि में छोड़ देता है अर्थात् वह अपनी विद्या को शिष्य तक पहुँचा देता है और शिष्य भी अपनी तथा आचार्य से प्राप्त सम्पूर्ण विद्या को पृथ्वी पर फैला देता है, सम्पूर्ण जगत् में बाँट देता है।

उपनयन संस्कार की विधियों में गुरु द्वारा शिष्य को सूर्यावलोकन कराने का विधान है। सूर्य दर्शन का अभिप्राय यह है कि आचार्य शिष्य से आशा करता है कि वह सूर्य के समान संसार में ज्ञान का प्रकाश फैलाएगा। सूर्य के दर्शन कराने का एक अन्य अभिप्राय यह भी है कि बालक का जीवन सूर्य की व्यवस्थित गति के समान नियन्त्रित हो– **'सूर्यस्य आवृतम् अन्वावर्तस्व'**– जैसे सूर्य की गति निश्चित है, वैसे तेरे जीवन का कार्यक्रम भी समय की डोरी से बँधा हो।

आचार्य की प्रदक्षिणा

उपनयन संस्कार में शिष्य आचार्य की प्रदक्षिणा करता है, इसका आशय यह है कि आचार्य की सूर्य से उपमा दी गयी है। सूर्य के चारों ओर पृथ्वी प्रदक्षिणा करती है और सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होती है। शिष्य जब आचार्य को सूर्य के सदृश देखता है, तब अपने को पृथ्वी के सदृश मानकर उसके चारों ओर प्रदक्षिणा करता है और आचार्य रूपी सूर्य के प्रकाश से अपने को प्रकाशित करने की भावना को हृदय में धारण करता है।

कन्याओं को भी यज्ञोपवीत का अधिकार था

उपनयन के अधिकार का अर्थ है– विद्या ग्रहण करने का अधिकार। वैदिक–संस्कृति में कन्याओं को यज्ञोपवीत ग्रहण करने का वैसा ही अधिकार था जैसा लड़कों को। वैदिक काल में स्त्रियाँ वेद–शास्त्र पढ़ा करती थीं इसमें उनके लिए कोई मनाही नहीं थी, इस क्षेत्र में लड़के लड़कियों की गति समान थी। गोभिलीय गृह्यसूत्र में लिखा है– **''प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीम् अभ्युदानयन् जपेत् सोमोऽददत् गन्धर्वाय इति।''** इस मन्त्र से स्पष्ट है कि कन्या यज्ञोपवीत धारण किए हों। कन्याओं का उपनयन संस्कार होता था, यह निम्न श्लोक से भी स्पष्ट है–

पुराकल्पे हि नारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा।।

अर्थात् प्राचीनकाल में स्त्रियों का मौञ्जीबन्धन–उपनयन होता था, वे वेदादि शास्त्रों का अध्ययन करती थीं। हारीत संहिता में भी कन्याओं के यज्ञोपवीत का प्रमाण मिलता है। माध्वाचार्य भी स्त्रियों को उपनयन के पिष्टपोषक थे।

कन्याओं को वेदाध्ययन का अधिकार था

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में कन्याओं के वेदाध्ययन की पुष्टि में अथर्ववेद का उद्धरण देते हुए लिखा है कि– **' ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्** (अथर्ववेद 11/24/3)। इस मन्त्र का अभिप्राय है– कन्या ब्रह्मचारिणी रहकर युवा पति को प्राप्त होती है। ब्रह्मचारिणी वही कही जा सकती है जो उपनयन पूर्वक ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करती हुई गुरु के आश्रम में रह चुकी हो। जो ब्रह्मचारिणी रही होगी उसका उपनयन संस्कार अवश्य हुआ होगा, यज्ञोपवीत अवश्य धारण किया होगा। श्रौत सूत्रों में लिखा है– **'इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्'** इस मन्त्र को पत्नी पढ़े। पत्नी मन्त्र तभी पढ़ सकती है जब उसे वेदाध्ययन का अधिकार प्राप्त हो। यजुर्वेद में भी स्त्री को 'स्तोम–पृष्ठा' कहा गया है जिसका अभिप्राय है कि वह वेद–मन्त्रों के विषय में पूछताछ की जिज्ञासा करती रहती है।

उपनयन संस्कार का सार्वत्रिक प्रचलन

उपनयन संस्कार एक महत्त्वपूर्ण संस्कार है। यह संस्कार वैदिक धर्म से अन्य धर्मों में भी पहुँचा। पारसी लोग जिनका उद्भव आर्यों से ही है, यज्ञोपवीत को 'कुस्ती' कहते हैं। पारसियों के पैगम्बर स्पित्म जरथुश्थ्र को पारसियों के अहुरमज्दा ने कहा कि जो कुस्ती (यज्ञोपवीत) को धारण नहीं करता उसे मृत्यु–दण्ड दिया जाना चाहिए। पारसियों के यहाँ कुस्ती सात साल में दी जाती है, और बालक इसे कमर के चारों तरफ लपेटता हैं। यह उनका महत्त्वपूर्ण संस्कार है। (पं. गंगाप्रसाद रिटायर्ड चीफ जज, Fountain Head of Religion)

वैदिक संस्कृति में यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र तथा पारसियों में 'कुस्ती' धारण का मन्त्र लगभग एक समान अर्थ का द्योतक है। वैदिक संस्कृति का मन्त्र निम्नलिखित है–

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।।

(पारस्कर गृह्यसूत्र 2।2।11।)

अर्थात् यज्ञोपवीत परम पवित्र है, आदिकाल से यह प्रजापति के साथ रहा है। यह आयु को देने वाला, बल देने वाला है इत्यादि। पारसियों का कुस्ती (यज्ञोपवीत) पहनने का मन्त्र निम्नलिखित है–

" फ्राते मजड्दाओ बरत् पौरवनीम् एयाओं घनिमस्ते हर–पाये संघेम मैन्युतसस्तेमम् वंघ्रदिम् दयेनीम् मज्दबास्नाम्।।"

इसका अर्थ यह है कि ए डोरा! तू बहुत बड़ा है, उज्ज्वल है (परमं पवित्रं शुभ्रम्) आयु तथा बल देने वाला (आयुष्यमग्र्यम्) है, तुझे मज्दा ने आरोपित किया है (प्रजापतेर्यत् सहजम्) मैं तुझे पहनता हूँ। इस प्रकार वैदिक संस्कृति का 'उपनयन–संस्कार' पारसियों में 'कुस्ती' नाम से अभी तक चल रहा है।

मुसलमानों में उपनयन को 'बिस्मिल्ला पढ़ना' कहते हैं। उनके यहाँ 4 साल, 4 महीने, 4 दिन, 4 पल का हो जाने पर बालक को बिस्मिल्ला सुनाकर पढ़ने को बैठाया जाता है। बिस्मिल्ला पढ़ते हुए उसे 'बिस्मिल्ला इर्रहमान इर्रहीम' पढ़ने को कहा जाता है जैसे वैदिक संस्कृति में 'गायत्री' पढ़ने को कहा जाता है।

ईसाइयों में बच्चे को 'बप्तिस्मा' (Baptism) देते हैं, जो उपनयन का ही एक रूप है। यह बैष्टिज्म एन्साइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन के अनुसार यूनानी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ 'पुनरुत्पत्ति' है। यही पुनरुत्पत्ति 'द्विज' शब्द से अभिव्यक्त होती है और 'द्विज' उसी को कहते हैं जिसका उपनयन संस्कार हो चुका है। (संस्कार चन्द्रिका (डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार), पृ. 251–252 का सारांश)।

"अग्निर्ज्योति" चाणक्यपुरी
अमेठी, उ. प्र.–227405
मो. 09415185521

'श्रावणी पर्व' अविद्या के नाश तथा विद्या की वृद्धि करने का विश्व का एकमात्र मुख्य पर्व'

● मनमोहन कुमार आर्य

भारत में श्रावण मास की पूर्णिमा को श्रावणी पर्व के रूप में मनाने की प्राचीन परम्परा है। यह पर्व आर्य पर्व है, जिसमें वैदिक धर्म व संस्कृति के संवर्धन व उन्नयन का रहस्य विद्यमान है। श्रावण मास वर्षा ऋतु का मास होता है। इस माह में प्रायः प्रतिदिन अथवा अधिकांश दिनों में देश के अधिकांश भागों में वर्षा होती है जिससे नदियों का जल स्तर बढ़ जाता है और अनेक स्थान बाढ़ की चपेट में आ जाते हैं। वर्षा ऋतु में सड़क मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने जाने में बाधायें भी आती हैं। देश ने विगत एक शताब्दी में उससे पूर्व शताब्दियों की तुलना में सभी क्षेत्रों में आशातीत प्रगति की है। अब पूर्व काल के समान वर्षा ऋतु लोगों को पीड़ित नहीं करती न कष्ट ही देती है। नगरों में अच्छी सड़के हैं, समृद्ध लोगों के पास कारें आदि हैं, वर्षा ऋतु में भी बसें व अन्य वाहन चलते हैं। अतः लोग वर्ष के अन्य दिनों की भाँति ही कार्य करते हैं। यह बात अलग है कि पैदल व दो पहियाँ वाहनों वाले लोगों को आवागमन में कठिनाईयाँ होती हैं। अधिक वर्षा से नदियों का जल स्तर बढ़ जाने से अनेक स्थानों पर बाढ़ व जल भराव की स्थिति बनती है, जिससे जन जीवन अस्त व्यस्त भी होता है। अतः आधुनिक समय में भी जहाँ सभी क्षेत्रों में प्रगति हुई है, वहीं जन जीवन में बाधक प्राकृतिक घटनाओं पर पूर्ण नियंत्रण नहीं पाया जा सका है। अतः प्राचीन काल में श्रावण मास में वर्षा के कारण लोग कार्यों से अवकाश रखते थे और घर में रहकर वेदों व वेद व्याख्या विषयक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर आध्यात्मिक व अन्य विषयों का अपना ज्ञान बढ़ाते थे। प्राचीन काल में आज की तरह सभी ग्रन्थ मुद्रित रूप में सबको सुलभ नहीं थे। अतः लोग निकटवर्ती आश्रमों में जाकर रहते थे और वहाँ रहने वाले वेदज्ञ विद्वानों से जीवन के उत्थान से संबंधित उपदेशों का श्रवण करते थे। ऐसा करने से ही श्रावण मास व इसकी पूर्णिमा के दिन मनाये जाने वाला श्रावणी-पर्व सार्थक होता था। समय के साथ-साथ लोगों में आलस्य व प्रमाद बढ़ने के कारण हमारे ब्राह्मणों व इतर वर्णों में वेदों के अध्ययन के प्रति रूचि कम होती गई और श्रावण मास के स्वाध्याय पर्व का स्वरूप विकृत होकर रक्षा बन्धन पर्व इसका रूप बन गया। इस पर्व का रक्षा बन्धन रूप भी इस दृष्टि से सार्थक होता है कि हम ऋषियों व वेदज्ञ योगियों के आश्रमों में जाकर, उनसे ज्ञान प्राप्त कर, अपने जीवन की रक्षा करें। इसके लिए वेदों का ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि विषयक यथार्थ ज्ञान व उनका आचरण आवश्यक है। ऐसा करने से अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि सम्भव होती है। प्राचीन काल में चातुर्मास वा श्रावण मास में वेदाध्ययन व वेदों के स्वाध्याय का कुछ ऐसा ही स्वरूप प्रतीत होता है। कालान्तर में श्रावणी पर्व का यह स्वरूप भी नहीं रहा और इसका विकृत रूप बहिनों द्वारा अपने भाइयों व राजस्थान के वीर राजपूतों की कलाइयों पर रक्षा सूत्र बाँधने ने ले लिया जिससे आवश्यकता पड़ने पर वह उनकी रक्षा कर सकें। इसका एक कारण यही प्रतीत होता है कि मुस्लिम शासन काल में जब नारियों पर अत्याचार व उनके अपमान की घटनाएँ होने लगीं तो बहिने अपने भाइयों व समाज के वीर पुरुषों को भाई बनाकर उन्हें रक्षा सूत्र बाँधती थी। अतः अतीत में इस पर्व के अवसर पर वेदों के स्वाध्याय सहित अनेक परम्पराएँ जुड़ गई और समय के साथ रक्षा बन्धन आदि का स्वरूप बदलने से वर्तमान परिस्थितियों में इसकी उपयोगिता भी कम व नगण्य सी रह गई है। जहाँ तक वेदों के स्वाध्याय व उसके अनुरूप आचरण का प्रश्न है, वह जितना पहले कभी उपयोगी था उतना ही आज भी है और आगे भी रहेगा।

श्रावणी पर्व वेदों के स्वाध्याय का पर्व है जिसे ऋषि तर्पण नाम भी दिया जाता है। ऋषि तर्पण का अर्थ ऋषियों को सन्तुष्ट करना व उनके ऋण से उऋण होना है। ऋषियों की प्रिय वस्तु वेदों का ज्ञान है, जिसकी प्राप्ति वेदोपदेश ग्रहण करने व वेदों के स्वाध्याय से होती है। वेदों की रक्षा मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा के समान महत्वपूर्ण है। अतः वेदों का संवर्धन व उसका अधिकाधिक प्रचार आवश्यक व अनिवार्य है। जो गृहस्थ व व्यक्ति वेदों के ज्ञान की प्राप्ति में स्वाध्याय आदि कार्यों में लगा है वह ऋषियों का प्रिय होता है। आजकल भी देखते हैं कि विद्यालय के अध्यापक उस विद्यार्थी को पसन्द करते हैं जो अधिक अध्ययनशील, चिन्तन, मननशील व अनुशासित होता है और जिसे पाठ्यक्रम का पूर्ण व अधिकांश ज्ञान होता है। अतः ऋषियों को सन्तुष्ट करने वा उनके ऋण से उऋण होने का एकमात्र उपाय यही है कि हम उपलब्ध वेद ज्ञान को बढ़ायें, उसका अध्ययन कर उससे अलंकृत हों, दूसरों में अधिकाधिक उसका प्रचार व प्रसार करें जिससे वेदों का उपलब्ध ज्ञान अप्रवृत्त होकर नाश को प्राप्त न हो। हमने देखा है कि मध्यकाल में वेदों का ज्ञान प्रायः पूरी तरह से अप्रवृत्त हो गया था, जिससे देश व संसार में अज्ञान का अन्धकार फैल गया। अविद्याजन्य मत-मतान्तर उत्पन्न हो गये जो आज भी समाप्त होने का नाम नहीं ले रहे हैं। आज भी लोगों में सत्य ज्ञान के प्रति प्रवृत्ति जागृत नहीं हो सकी है। यह आज के समय का सबसे बड़ा आश्चर्य है कि मनुष्यों में सत्य ज्ञान की प्राप्ति व उसके अभ्यास की प्रवृत्ति नहीं है। इसका परिणाम मनुष्य व देशवासियों को दुःख के अतिरिक्त अन्य कुछ होने वाला नही है। इसे ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में अच्छी तरह से समझाया है। वेद ज्ञान दुःखों से मुक्ति का कारण है। यदि वेद ज्ञान से शून्य होंगे तो हमारे आत्मिक व शारीरिक दुःख दूर नहीं होंगे। जब तक मुक्त नहीं होंगे, भिन्न-भिन्न योनियों में बार बार हमारा जन्म होता रहेगा। अतः वेदों व वेदों के व्याख्या ग्रन्थों का स्वाध्याय व उनका जीवन में आचरण ही ऋषि तर्पण है। यह ऋषि तर्पण इस लिए कहलाता है कि इससे हम ऋषि ऋण से मुक्त होते हैं। वेदों का स्वाध्याय व अध्ययन जितना अधिक होगा उतना वैदिक धर्म व संस्कृति उन्नत व समृद्ध होगी। स्वाध्याय व ऋषि तर्पण का यह कम लगभग साढ़े चार मास चलता है जिसका आरम्भ उपाकर्म से और समापन उत्सर्जन से होता है। इस विषय में अधिक जानने के लिए आर्य विद्वान पं. भवानी प्रसाद लिखित **'आर्य पर्व पद्धति'** का अध्ययन आवश्यक है।

वेद और यज्ञ का परस्पर गहरा सम्बन्ध है। सभी यज्ञ वेद मन्त्रों के पाठ व वेद मंत्रों में निहित विधियों के द्वारा ही होते हैं। अतः श्रावण मास में यज्ञों को नियम पूर्वक करना चाहिये। यज्ञ से हानिकारक किटाणुओं का नाश होता है। वायु की दुर्गन्ध का नाश होकर वायु सुगन्धित हो जाती है जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होती है। अनेक प्रकार के रोग नियमित यज्ञ करने से दूर हो जाते हैं और यज्ञ करने से अधिकांश साध्य व असाध्य रोगों से बचाव भी होता है। यज्ञ के प्रभाव से निवास स्थान व घर के भीतर की वायु यज्ञाग्नि की गर्मी से हल्की होकर बाहर चली जाती है और बाहर की शीतल व शुद्ध वायु घर के भीतर प्रवेश करती है जो स्वास्थ्यप्रद होती है। वायु में गोघृत व वनौषधियों सहित मिष्ट व पुष्टिकारक पदार्थों की आहुतियाँ देने से उस वायु का लाभ न केवल यज्ञकर्ता को होता है अपितु वह वायु दूर दूर तक जाकर असंख्य लोगों को लाभ पहुँचाती है। जितने लोग लाभान्वित होते हैं उसका पुण्य भी यज्ञकर्ता को मिलता है। यज्ञ में वेदमन्त्रों को बोलकर आहुति देने से मन्त्र में निहित ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना सहित उसके अर्थों को जानकर उसके अनेक आध्यात्मिक व भौतिक लाभ भी यज्ञ करने वाले मनुष्य को प्राप्त होते हैं। इससे वेदों की रक्षा भी होती है। इसी कारण वैदिक धर्म में प्रत्येक पर्व पर यज्ञ करने का विधान है, जिससे यह सभी लाभ यज्ञ कर्ता व उसमें उपस्थित लोगों सहित पड़ोसियों व दूरदेशवासियों को भी प्राप्त हो सकें। श्रावणी के दिन विशेष पर्व पद्धति के अनुसार यज्ञ आयोजित कर इसका लाभ सभी गृहस्थियों को उठाना चाहिये।

श्रावणी पर्व श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन मनाया जाता है। हम अपने अनुभव के आधार पर कहना चाहते हैं कि श्रावण मास से आरम्भ कर चार व साढ़े मास तक वैदिक साहित्य का अध्ययन वा स्वाध्याय करना चाहिये, इससे वर्तमान व शेष जीवन सहित परजन्म में भी लाभ होता है, ऐसा सत्शास्त्र बताते हैं। इसके लिए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय का अध्ययन कर ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेद व यजुर्वेद भाष्य का स्वाध्याय करना चाहिये। ऋग्वेद के अवशिष्ट भाग व अन्य वेदों पर आर्य विद्वानों के भाष्य का अध्ययन करना जीवन में अभ्युदय व निःश्रेयस में अग्रसर करता है। आर्य विद्वानों स्वाध्याय के लिए अनेक ग्रन्थों की रचना की है, जिसके अध्ययन से मनुष्य निर्भ्रान्त स्थिति का लाभ प्राप्त करता है। यही जीवन का उद्देश्य भी है। इन्हीं शब्दों के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

196 चुक्खूवाला-2
देहरादून-248001
फोन:09412985121

☞ पृष्ठ 05 का शेष

महर्षि, सत्यार्थ प्रकाश...

मिला– नहीं, शिवलिंग है। महर्षि ने कहा – तब तो कैलाशवासी शिव हिजड़ा हो गया। 3. स्वामीजी से किसी व्यक्ति ने लोटा माँगा। स्वामीजी ने पूछा किसलिए चाहिए? उस व्यक्ति ने कहा– शिवलिंग पर जल चढ़ाना है। ईश्वर ने तुम्हें लोटा दिया है। भरो और चढ़ा दो, महर्षि ने कहा–

महर्षि जैमिनी के पश्चात् महर्षि दयानन्द वेदोक्त ईश्वर की पुर्नस्थापना का प्रयत्न करने जा रहे थे। देश में ही असंख्य मतमतान्तरो, पूजा–पद्धतियों का घटाटोप छाया हुआ था। सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारह से चौदह समुल्लास (अध्याय) के 220 पृष्ठों में इनका विवरण और उनकी निस्सारता का वर्णन मिलता है। इनके अध्ययन से पता चलता है कि कितने व्यक्तियों से उन्हें लोहा लेना पड़ा होगा।

महर्षि दयानन्द के निधन के 134 वर्ष पश्चात् भी एक वेदोक्त ईश्वर की स्थापना का स्वप्न अभी दूर, बहुत दूर है।

वेदोक्त ईश्वर की स्थापना समस्त सामाजिक बुराइयों और अंध विश्वासों के उन्मूलन में शिक्षा का नितान्त अभाव ही प्रमुख कारण मानते थे। आमजन का बौद्धिक स्तर उठाने के लिए अनिवार्य शिक्षा के पक्षधर थे। महर्षि के काल में 20 करोड़ आबादी का एक प्रतिशत से ज्यादा शिक्षित वर्ग नहीं होगा। उस पर भी मिडिल तक पढ़ लिया, बहुत हो गया। बाऊजी के एक दक्षिण भारतीय हाईस्कूल पास मित्र श्री राघवन साहब डिप्टी कलेक्टर थे। कलेक्टर या जिलाधीश तो आयातित ही होते थे। कन्या शिक्षा की स्थिति और भी दयनीय थी। मेरी स्वर्गवासी तीन बड़ी बहनों ने स्कूल का मुँह भी नहीं देखा था।

पाँच वर्ष के बालक–बालिकाओं के लिए शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था चाहते थे। सैद्धान्तिक रूप में ही नहीं, उन्होंने स्वयं ही पाठशालाएँ स्थापित कीं।

शिक्षा में ज्ञान–विज्ञान के समस्त, तथाकथित आधुनिक विषय गणित, भौतिक, रसायन शास्त्र, चिकित्सा शास्त्र के अध्ययन की व्यवस्था चाहते थे। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में उन्होंने प्रमाणित कर दिया है कि अंकगणित, बीज गणित व रेखागणित वेद में उपलब्ध हैं। 'शून्य' के आविष्कारक 'आर्यभट्ट' थे। इस आविष्कार ने अन्तरिक्ष विज्ञान में अभूतपूर्व क्रान्ति कर ऋषियों की पहुँच को प्रमाणित कर दिया। न्यूटन का बताया जाने वाला पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत 'भास्कराचार्य' का है जिसका हजारों वर्ष पूर्व उल्लेख उन्होंने अपने 'सिद्धान्त शिरोमणि' ग्रन्थ में किया है। विमान विद्या का ज्ञान भी भारतीय मनीषियों को था। महर्षि ने 'विमान शास्त्र' ग्रन्थ का उल्लेख किया है। ईंधन के रूप में पारे का उल्लेख भी किया है। रावण के पास पुष्कर विमान था जिसमें बैठ कर मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का दल अयोध्या पहुँचा था। पवन पुत्र हनुमान भी विमान में बैठ कर जड़ी–बूटी लाने गए होंगे। मानव शरीरधारी हनुमान जी के अतिरिक्त किसी अन्य मानव का वायु में सशरीर उड़ कर जाने का उल्लेख कहीं नहीं मिलता।

यह तो अब सर्वविदित हैं कि शिवकर बापूजी तलपदे ने राइट ब्रदर्स से आठ वर्ष पहले मुम्बई की चौपाटी पर विमान उड़ान का परीक्षण किया था। लेख के अन्त में टिप्पणी देखिए।

आचार्य सुश्रुत के पास शल्य चिकित्सा के सर्वोत्तम अति सूक्ष्म औजार थे।

यही नहीं कि महर्षि वेदों में विज्ञान की उपस्थिति का उल्लेख कर गर्व–गर्जना कर रहे थे। आधुनिक विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र में अग्रणी जर्मनी में भारतीय युवकों को जर्मनी भेज कर प्रशिक्षित करने के कार्यक्रम पर काम कर रहे थे।

निश्चित ही प्राथमिक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा और उच्च शिक्षा की भाषा संस्कृत ही होती। मैक्समूलर, मैकाले के लिए भले ही वेद गड़रिए के गीत हों, महर्षि दयानन्द संस्कृत को ज्ञान–विज्ञान के विचारों की संवाहक के रूप में पर्याप्त समृद्ध मानते हैं। और अब तो वैज्ञानिक कम्प्यूटर के लिये सर्वोत्तम भाषा मानते है। भारत का रक्षा मंत्रालय भी अपने कोड संस्कृत में तैयार कराने का समाचार दो तीन वर्ष पहिले प्रिंट मीडिया में आ चुका है। विश्व के उन्नत देशों में संस्कृत पठन पाठन की व्यवस्था है। संस्कृत को उच्च शिक्षा का माध्यम बनाने की बात पर नाक–भौं चढ़ाने वालों का बताना चाहूँगा कि तुर्की जब स्वतंत्र हुआ था तब उस देश की कोई भाषा नहीं थी। तुर्की बोली के रूप में ही प्रचलित थी। राजकाज की भाषा अरबी–फारसी थी। तुर्की देश के निर्माता कमालपाशा ने एक झटके में तुर्की को राजभाषा घोषित कर दिया। रेगिस्तान में बसाया गया देश इज़राइल युरोप से विशेष कर जर्मनी से निष्कासित यहूदियों का देश है जर्मनी में भी वे आपसी व्यवहार में हिब्रु भाषा का ही प्रयोग करते थे यद्यपि ज्ञान–विज्ञान, राजकाज में जर्मन भाषा के प्रयोग में पूर्णतया निष्णात थे। स्वतंत्र इज़राइल की भाषा हिब्रु है। उच्चत्तम शिक्षा का माध्यम भी वही है।

महर्षि शिक्षा का माध्यम मातृभाषा और संस्कृत ही निर्धारित करते। शिक्षा व्यवस्था गुरुकुलों में होती। गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त करने वाले ब्रह्मचारियों और ब्रह्मचारिणियों में वर्ग भेद नहीं होता। ब्रह्चारी उच्चवर्ग से है या निम्नवर्ग से कार्य आबंटन में पठन–पाठन में कोई भेद नहीं होता।

शिक्षा समाप्ति पर आचार्य द्वारा ब्रह्चारी के गुण, कर्म, स्वभाव के अनुरूप 'वर्ण' ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कर दिया जाता था। यह व्यवस्था 'परिवर्तनीय' भी थी। जन्म जाति से कुछ लेना–देना नहीं होता।

इस वर्ण व्यवस्था की संवाहक आश्रम व्यवस्था होती है। विद्या, तेज व बल अर्जित 25 वर्षीय युवक व 16 वर्षीय युवती विवाह योग्य माने जाते हैं। स्वयंवर को सबसे श्रेष्ठ विवाह माना जाता है। कन्या स्वयं अपना वर चुनती है। इस प्रसंग में नारी मनोविज्ञान की नैसर्गिक समर्पण–भावना निहित है। यही समर्पण–भावना समस्त जीवन में सुख का आधार बनती है। यही समर्पण भावना उसे समस्त झंझावातों में, जीवन के उतार–चढ़ाव में, कंधे से कंधा मिला कर साथ रखती है। भारतीय संस्कृति का आधार स्तम्भ रही है। लिव–इन रिलेशन की कामुकता, छिछोरापन इसमें नहीं है। तू नहीं तो और सही का कुत्तापन भी नहीं है। सीता और द्रौपदी दोनों ने ही स्वयंवर विवाह किए थे। उनके जीवन के घटना–चक्रों से आप परिचित ही हैं।

गृहस्थाश्रम में विवाहित युगल को स्त्री के रितुगामिनी होने के पश्चात, सीमित अवधि के लिये यौनाचार की स्वीकृति और संतान प्राप्ति का उद्देश्य पूरा होने पर सर्वथा वर्जन।

गृहस्थ आश्रम अवधि 25 वर्ष, गृहस्थाश्रम त्याग कर पूर्ण ज्ञान–संवर्धन के लिए वानप्रस्थाश्रम के 25 वर्ष, शेष 25 वर्ष अर्जित अनुभव और ज्ञान के प्रचार–प्रसार के लिए। शतवर्षीय आयु जीवन का चक्र पूरा हुआ। पचास वर्ष की आयु पूरी किए हुए सबल स्वस्थ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ग के नर–नारी राष्ट्र सेवा के लिए उपलब्ध।

यह व्यवस्था, काल्पनिक व पुस्तकीय नहीं थी। व्यावहारिक और सुस्थापित व्यवस्थित थी जो हजारों सदियों चलीं। गर्भाधान संस्कार से लेकर अंतिम 16वें संस्कार–अत्येष्टि तक मानव निर्माण की वेदानुकूल व्यवस्था जर्मनी के तानाशाह हिटलर की मानव निर्माण योजना से श्रेष्ठत्तम है। हिटलर ने अपने जीवशास्त्र के वैज्ञानिकों को आदेश दिया था कि एक विशेष लम्बाई–चौड़ाई व वजन के शरीरधारी आर्यों का निर्माण किया जावे। उसकी मान्यता थी कि जर्मन जाति ही विशुद्ध आर्य जाति है और वही विश्व पर शासन करने के लिए बनी है। शरीर निर्माण तो सम्भव था पर मस्तिष्क निर्माण के लिए उनके पास कोई योजना नहीं थी।

इस दूरगामी विशाल लक्ष्य की प्राप्ति के लिए महर्षि को दिन–रात कार्य करना अनिवार्य था, प्रतिज्ञा बद्ध संन्यासी की मजबूरी थी। विष दग्ध काया से इस महान योगी ने, जिसे महर्षि अरविन्द ने तत्कालीन योगियों में 'हिमालय के उच्चतम शिखर पर आसीन योगी घोषित किया, चतुर्दिक दिशाओं में अनवरत कार्य को गतिमान रखा। गति की तीव्रता और बढ़ा दी।

बालक–बालिकाओं के लिए अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का उल्लेख कर चुका हूँ। बाल–विवाह का पूर्णतया निषेध, विधवा–विवाह का समर्थन बाँझ घोषित कर व्यभिचार की शिकार होने वाली विवाहिताओं के लिए नियोग का विकल्प। इसके अतिरिक्त यज्ञ में बलि प्रथा का समर्थन करने वालों मांसाहार भाक्षियाँ, मादक द्रव्यों के समर्थकों पर उनकी दुधारु तलवार चलती रही।

भारत की ऐसी विषम परिस्थितियों से जुझते हुए भी उन्होंने देश की 'स्वतंत्रता' प्राप्ति का अलख न केवल जगाए रखा बल्कि तीव्र गति प्रदान की। स्वतंत्रता प्राप्ति की ललक, धधकती आग ने उन्हें किस सीमा तक निर्भय बना दिया देखना होगा–

कलकत्ते के लार्ड बिशप ने महर्षि दयानन्द की नाक में नकेल डालने के लिए वायसराय नार्थ ब्रुक्स से भेंट का आयोजन किया। भेंट होने पर वायसराय ने कहा– विचारों को स्वतंत्रता पूर्वक प्रकट करने के लिए आप ब्रिटिश शासन की प्रशंसा करते हैं साथ में यह भी कह दिया करें कि ब्रिटिश शासन सदैव के लिये बना रहे। महर्षि ने उत्तर दिया कि वह तो ब्रिटिश शासन से शीघ्र से शीघ्र मुक्ति और स्वराज्य प्राप्ति की नित्य प्रार्थना करते हैं। वायसराय ने उन्हें 'बागी फ़कीर' घोषित किया और सदैव के लिए गुप्तचर लगाने की व्यवस्था कर दी।

(देवेन्द्र नाथ मुखोपाध्याय पृष्ठ 308 विवादित मानते है परन्तु वैदिक विद्वान, सांसद सत्यकेतु विद्यालंकार उसे सत्य घटना निरूपित करते है।)

.... क्रमशः

22, नगर निगम, क्वार्टर्स, जीवाजीगंज,
लश्कर, ग्वालियर, मध्य प्रदेश– 474001
मो.– 9516622982

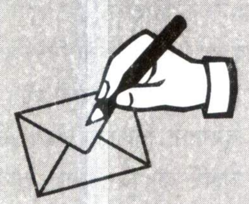

पत्र/कविता

प्यास अधूरी है अभी और पिलादे नीर

लगती बहुत सुहावनी परियों जैसा रूप।
सर्दी में चेटक करे अप्सरियों सी धूप।।

सावन बरसा झूमकर धरती हुई निहाल।
तपन–तोप अब शान्त हैं नीचे मस्त मराल।।

प्यास अधूरी है अभी और पिलादे नीर।
बादल बोला भूमि से रख थोड़ी सी धीर।।

प्राण कण्ठ तक आ गये मुश्किल धरनी धीर।
भभकी गर्मी ने दिया रोम–रोम की चीर।।

यह मेरे वश में नहीं बादल बोला खीझ।
मेरे साथी ला रहे सागर से जल रीझ।।

जलापूर्ति मिल जाय तो दूँगा पूरा सींच।
धैर्य धरा मत छोड़ना पल भर आँखें मींच।।

भीतर गर्मी की चुभन बाहर लू–भूचाल।
बतला दे पर्जन्य तू कहाँ जायँ ये व्याल।।

सावन सर्पिल फन हुआ बदन–मदन का जोर।
बहुत भयंकर हो रहा बाहर–भीतर शोर।।

फल–फसलें पकवान हैं धरती तवा–परात।
बादल ने न्यौता दिया नभ है टैंट–कनात।।

फसलों पर ओले गिरे ले शोलों का रूप।
नमक छिड़कने घाव पर खिली चिलचिली धूप।।

डॉ. सास्वत मोहन मनीषी

बच्चों को क्यों पिसवा रहे हैं?

ऐसा लगता है कि उत्तराखंड की सरकार को कोई दौरा पड़ गया है। जो वह करने जा रही है, वह भारत में आज तक किसी भी सरकार ने नहीं किया है। अब उत्तराखंड के 18000 सरकारी सरकारी स्कूलों में सारे विषयों की पढ़ाई का माध्यम अंग्रेज़ी होगा। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, जनसंघ और भाजपा के नेता कहीं भी मुँह दिखाने लायक नहीं रहेंगे, क्योंकि उनके सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को सबसे ज्यादा पलीता इस प्रकार का निर्णय ही लगाएगा।

अगले साल से पहली कक्षा से ही बच्चों की सारी पढ़ाई अंग्रेज़ी में होगी यानि। वह हिरण पर घास लादा जायेगा। सारी दुनिया के शिक्षा शास्त्री इस बात से सहमत हैं कि बच्चों पर विदेशी भाषा का माध्यम थोप देने से उनका बौद्धिक विकास रुक जाता है। इस निर्णय से छात्रों की जो शक्ति किसी विषय को समझने में लगनी चाहिए, वह अंग्रेज़ी से कुश्ती लड़ने में बर्बाद हो जाएगी। वे रटटू तोते बन जाएँगे। उनकी मौलिकता नष्ट हो जाएगी। वे दिमागी तौर पर बीमार हो जाएँगे। जर्मनी में यह मूर्खतापूर्ण प्रयोग किया जा चुका है। जो बच्चे मातृभाषा और राष्ट्रभाषा से स्कूलों में वंचित रहते हैं, वे अपने ही घर में बेगाने हो जाते हैं। वे अपनी परंपराओं, अपनी विचार–पद्धति और अपनी संस्कृति से कट जाते हैं। भाषाभ्रष्ट को संस्कार भ्रष्ट होते देर नहीं लगती। अकबर इलाहाबादी ने क्या खूब लिखा है।

हम उन कुल किताबों को काबिले–जब्ती समझते हैं।

जिन्हें पढ़कर बेटे बाप को खब्ती समझते हैं।।

उत्तराखंड की सरकार ने इतना दुस्साहसिक निर्णय क्यों किया? शायद यह सोचकर कि बच्चे अच्छी अंग्रेज़ी जानेंगे तो बड़ी नौकरियाँ हथिया लेंगे। नौकरियाँ हथियाने के लिए आप अपने बच्चों को अंग्रेज़ी की चक्की में क्यों पिसवा रहे हैं? यदि आप में दम है, पौरुष है तो इस चक्की को ही तोड़ डालिए। सरकारी नौकरियों से अंग्रेज़ी हटाओ का नारा लगाइए। भारत जैसे भाषायी गुलाम राष्ट्रों की बात जाने दीजिए, दुनिया के किसी भी स्वाभिमानी और महाशक्ति राष्ट्र में लोग अपने बच्चों को विदेशी भाषा की चक्की में पिसने नहीं देते। हमारा नेतृत्व हीनता ग्रंथि का शिकार है। उसे यह पता ही नहीं कि विदेशी भाषाएँ कब और क्यों पढ़ाई जानी चाहिएँ। इसीलिए इस प्रकार के निर्णय ले लिए जाते हैं।

डॉ. वेद प्रताप वैदिक
drvaidik@gmail.com

****

आतंक के साये में अमरनाथ यात्रा

10 जुलाई की रात को अमरनाथ यात्रियों पर हुए आतंकी आक्रमण पर क्या अब भी कोई प्रतिक्रिया करेगा कि " आतंकियों का कोई धर्म नही होता"? धार्मिक यात्रा को ध्यान में रखते हुए पूरे क्षेत्र में रेड एलर्ट व अत्यधिक सुरक्षा व्यवस्था की तैयारियाँ होने के उपरांत भी मज़हबी जिहादियों ने हिन्दू श्रद्धालुओं पर घात लगाकर आक्रमण करके आतंकी बुरहान बानी की वर्सी के दो दिन के अंदर अपना जिहादी कार्य पूरा किया। कौन है और क्यों है इन हिन्दू श्रद्धालुओं का शत्रु? क्या कोई मीडिया इसका विश्लेषण करेगा? क्या अब कोई सरकारी/सामाजिक पुरस्कार प्राप्त ढोंगी सेक्युलर व मानवतावादी अपने सम्मान को लौटाएगा? अनेक पीड़ा दायक प्रश्न एक साथ घाव कर रहें हैं पर समाधान कोई नहीं? केवल निंदा, भर्त्सना और कैंडल मार्च से क्या भारत भूमि को उसके ही भक्तों के लहू से लहूलुहान होने से बचाया जा सकता है? क्या जीवन के मूल्य का आंकलन रुपयों में करके धर्म के लिए बलिदान हुई हुतात्माओं को मोक्ष मिल जायेगा? परंतु हमारे सेक्युलर कीड़े जो साम्प्रदायिक सौहार्द की मृगमरीचिका से बाहर ही नही निकलना चाहते को उस बस के ड्राइवर 'सलीम' में केवल एक शांतिदूत ही दिखता है जबकि इस्लामी आतंकवादियों की गोलियों से शिकार हुए हिन्दू तीर्थ यात्रियों व उनके परिवारों के लिए उनमें कोई पीड़ा नही होती और न ही उनके प्रति कोई सद्भावना होती हैं।

विचारणीय बिंदु यह है कि हम हिन्दू इन आतंकियों के अत्याचारों को साम्प्रदायिक सौहार्द के नाम पर यों ही सहते रहें और इन दुष्टों को हमारी उदारता व सहिष्णुता का कोई आभास ही न हो बल्कि उनकी क्रूरता और अधिक उग्र होती जाय तो फिर हम क्या करें? हम अपने इष्ट की भक्ति में इतने लीन होकर अत्याचार सहकर भी मौन हैं क्यों? क्या हमको हमारे देवी–देवताओं की भक्ति से अन्याय सहने व कायर बने रहने का कोई आत्मघाती सन्देश मिलता है या फिर दुष्टों का विनाश करके धर्म की रक्षा करके मानवता के उच्च मानवता के उच्च मापदंण्डों की स्थापना करने का कर्तव्य बोध होता है? क्या हमारी भक्ति हमको आत्मरक्षार्थ दुष्टों/ आतंकियों से संघर्ष करने में बाधक है या फिर हम ही संसारिक सुखों के भोगविलास में लिप्त होकर आते हुए संकट की आंधी के प्रति उदासीन रह कर सरकार को कोसने के अतिरिक्त प्रभावशाली प्रतिकार करने से बचना चाहते हैं?

बड़ी विचित्र स्थिति है कि इतना सब कुछ जब अपनी ही मातृभूमि पर वर्षों से हो रहा हो और यह अत्याचारी सिलसिला थम ही नहीं रहा तो भी ये पीड़ित बंधु अपने–अपने क्षेत्रों में वापस आ कर इन कट्टरपंथियों के घृणास्पद व शत्रुता पूर्ण व्यवहार को उजागर करके कोई राष्ट्रव्यापी आंदोलन क्यों नहीं करते? हमको स्मरण रखना चाहिए कि कुछ वर्षो पूर्व "अमरनाथ यात्रा" में कुछ सरकारी प्रतिबंध लगाये जाने पर जम्मू के हिन्दुत्ववादी नेता श्री लीलाधर ने अपने सहयोगियों के साथ उसका कड़ा विरोध किया और उसके समर्थन में विश्व हिन्दू परिषद्, शिव सेना व अन्य हिन्दू संगठनों ने इसको राष्ट्रव्यापी आंदोलन बनाने में सकारात्मक भूमिका निभाई थी। उस समय देश का वातावरण कश्मीर से कन्याकुमारी तक "अमरनाथ यात्रा" में आतंकियों व सरकार की दमनकारी नीतियों के प्रति पूर्णतः आक्रोशित था।

क्या हम उन कट्टरपंथी हज यात्रियों की विदेश जाने के लिए व विदेश में भी अरबों रुपयों की सहायता करते रहे और वे हमें हमारी ही भूमि पर हमको अपने तीर्थ स्थलों के दर्शन के लिए बाधित करके उत्पीड़ित करते रहें, तो फिर इस भेदभाव पूर्ण व्यवहार का जिम्मेदार कौन? क्या यह हमारे मौलिक अधिकारों का हनन नहीं? क्या धर्मनिर्पेक्षता के झूठे आडम्बर में हिन्दू ही पिसता रहे और अपनी संस्कृति व अस्तित्व को आतंकियों की धार्मिक कट्टरता की भट्टी में जलने दे? बल्कि हम इसको "आतंकवाद का कोई धर्म नहीं होता" कहकर आँख बंद करके हाथ धरे बैठे रहें..लेकिन कब तक?

विनोद कुमार सर्वोदय
गाज़ियाबाद
guptavinod038@gmail.com

****

महात्मा कन्हैया लाल महता जी का जन्मदिवस 'विद्यार्थी अवार्ड दिवस' के रूप में संपन्न हुआ

महर्षि दयानन्द शिक्षण संस्थान एवं आर्य समाज, नेहरू ग्राउण्ड ने अपने संस्थापक अध्यक्ष महात्मा कन्हैया लाल महता जी का जन्मदिवस हर्षोल्लास के साथ 'विद्यार्थी अवार्ड दिवस' के रूप में संपन्न किया। इस असवर पर के.एल. महता दयानन्द पब्लिक विद्यालयों के विद्यार्थियों ने महता जी के प्रति अपनी श्रद्धा को भाव रूपी शब्दों में पिरोकर अनेक गीत गाए।

समारोह की मुख्य अतिथि श्रीमती सीमा त्रिखा, मुख्य संसदीय सचिव (हरियाणा सरकार) तथा विशिष्ट अतिथि श्रीमती सुमन बाला महापौर, फरीदाबाद ने उपस्थित होकर समारोह की गरिमा बढ़ाई। श्रीमती सीमा त्रिखा ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि उन्हें हमेशा बेहद गर्व की अनुभूति होती है जब प्रदेश के दूसरे शहरों में फरीदाबाद का परिचय लोग 'महर्षि दयानन्द शिक्षण' संस्थान के रूप में देते है। वैदिक संस्कृति और आधुनिक शिक्षा का यह संस्थान पर्याय रहा है।

इस अवसर में के.एल. महता दयानन्द विद्यालयों में सी.बी.एस.ई. तथा हरियाणा बोर्ड में सर्वोच्च अंक पाने वाले विद्यार्थियों को स्वर्ण पदक प्रदान किए गए। आर्य वीरांगना कु. प्रिया भड़ाना तथा कॉलेज की छात्रा नेहा कुमारी को भी स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया। मा. विष्णु आर्य को भी आर्य वीर स्वर्ण पदक दिया गया। संस्थान की अध्यक्षा डॉ. (श्रीमती) विमल महता ने सभी अतिथिजन के प्रति आभार व्यक्त किया अनेक गणमान्य अतिथि इस समारोह में शामिल हुए।

डी.ए.वी. समाना (पंजाब) में नैतिक शिविर का आयोजन

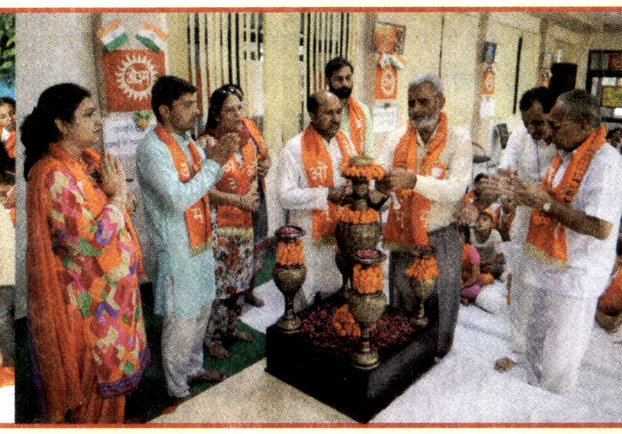

डी.ए.वी. स्कूल समाना के प्रांगण में शिक्षाविदों एवं संन्यासियों के माध्यम से आज की युवा पीढ़ी को आधुनिक समय में फैली कुरीतियों से बचाकर तथा भारतीय संस्कृति से ओत-प्रोत देशभक्ति व संस्कारों से सं. स्कारित करके श्रेष्ठ समाज की स्थापना हेतु सात दिवसीय नैतिक शिक्षा शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर में कई महान विभूतियों एवं प्रकाण्ड विद्वानों को आमंत्रित किया गया। प्रतिदिन शिविर का आरंभ योगासन, प्राणायाम से किया गया तत्पश्चात् सभी विद्यार्थी यज्ञ का आयोजन मंत्रोच्चारण के साथ मिलकर करते थे। यज्ञ के उपरांत मधुर प्रार्थना व भजन गायन होता था। प्रवक्ता के रूप में आचार्य दीपचंद शास्त्री जी ने समाज सेवा व माता-पिता के प्रति सेवा-भावना जागृत करने के लिए बच्चों को प्रेरित किया, डॉ. प्रमोद योगार्थी जी ने अनुशासन का महत्त्व तथा बड़ों के सम्मान के लिए बच्चों में सदगुणों का संचार करने की चेष्टा की, आचार्य गणेश दत्त शास्त्री जी व डॉ. रामकुमार जी ने सादा जीवन और उच्च विचार व चरित्र को उच्च बन. ाने के लिए सामाजिक बुराईयों से किस प्रकार बचना है- इस पर अपने विचारों से अवगत कराया।

बच्चों को पर्यावरण संरक्षण के विषय में समझाया गया तथा वहाँ उपस्थित सभी बच्चों को वृक्षारोपण के लिए प्रेरित किया। शिविर के समापन समारोह पर यज्ञ का आयोजन तथा भजन/कीर्तन द्वारा वातावरण में अध्यात्मिक रस का संचार किया गया।

शिविर के दौरान अपने अनुभव को बच्चों ने अपने शब्दों में व्यक्त किया तथा नैतिक शिक्षा संबंधित प्रश्नोत्तरी में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। इस प्रश्नोत्तरी में अच्छा प्रदर्शन करने वाले बच्चों को पुरस्कार व सर्टिफिकेट प्रदान किए गए। नृत्य व संगीत की गतिविधियों का भी आयोजन किया गया

☞ पृष्ठ 01 का शेष

आर्य युवा समाज के तत्वाधान...

इसका श्रेय आर्य युवा समाज व विद्यालय के विद्यार्थियों को जाता है जिन्होने अभिभावकों को प्रेरित किया । शिविर में विद्यालय के समस्त अध्यापक वर्ग ने भी रक्तदान किया इसके अलावा विद्यार्थियों के अभिभावकों ने भी अधिक से अधिक संख्या में आकर रक्तदान करने में अपना अतुलनीय योगदान किया। पहली बार रक्तदान करने वाले युवकों व युवतियों ने अपना बेहतर अनुभव बताते हुए रक्तदान करने की बात कही। इस अवसर पर 78 यूनिट रक्त एकत्र हुआ। लगभग 450 रक्तदाता इस अवसर पर उपस्थित हुए।

विद्यालय प्रधानाचार्या अनुपमा शर्मा ने रक्तदान के प्रति जागरूकता लाने के उद्देश्य से कहा कि समस्त प्राणियों के हित के लिए हमें यथासमय रक्तदान करते रहना चाहिए। यह आवश्यक नहीं कि जन कल्याण के लिए हम डॉक्टर बनें या किसी अन्य प्रतिष्ठित पद पर आसीन हों बल्कि सामान्य मनुष्य के रूप में भी हम जन हित में अपना योगदान दे सकते हैं। उन्होंने युवाओं से समाज में रक्तदान को लेकर होने वाली भ्रातियों को दूर कर नियमित रक्तदान करने का आहवान किया। उन्होंने बताया कि आर्य समाज प्रतिवर्ष जन कल्याण के लिए इस तरह के कार्यक्रम आयोजित करता रहता है ताकि लोग समाज कल्याण के प्रति जागरूक हों तथा समाज के अच्छे कार्यों में अपना योगदान देते रहें। आर्य युवा समाज का उद्देश्य लोगों को आर्य समाज के नियमों के प्रति अवगत करवाना है ताकि लोग अपनी संस्कृति से हमेशा जुड़े रहें।

ज्ञान पथिक और 'गायत्री मन्त्र'

ओ३म् वह परमात्मा सबका रक्षक है। **भू:** प्राणों से भी अधिक प्रिय है। **भुव:** दु:खो को दूर करने वाला है। **स्व:** सुख रुप है।

तत्सवितु: सृष्टि को पैदा करने और चलाना वाला है। सर्व प्रेरक। **देवस्य** दिव्य गुणा युक्त परमात्मा **वरेण्यंभर्गो** प्रकाश, तेज, ज्योति, ज्ञापक, प्रकाश्य, अभिव्यक्ति, जो हमें सर्वाधिक प्रिय है। **घीमहि** हम उसका ध्यान करें उस परम परमेश्वर की अपार संरचना का। **धियो यो न: प्रचोदयात्** जो हमारी बुद्धियों को प्रेरित करे।

गायत्री मन्त्र और प्रेम पथिक

ओ३म् माँ की गोद में बालक की तरह में उस प्रभु की गोद में बैठा हूँ। **भू:** मुझे उसका असीम वात्सल्य प्राप्त है। **भुव:** मैं पूर्णा निरापद हूँ। **स्व:** मेरे मन में रिमझिम-रिमझिन सुख की वर्षा हो रही है। और मैं सम्पूर्ण आनन्दित हूँ।

तत्सवितु: उसके प्रकाश से, रोम-रोम पुलकित है तथा उसकी सृष्टि से मैं परम मुग्ध हूँ। **देवस्य** दिव्यगुणयुक्त परमात्मा **वरेण्यंभर्गो** प्रकाश तेज, ज्योति, जलक, प्रकाश्य अभिव्यक्ति, जो सर्वाधिक प्रिय है। **घीमहि** उदय होता सूर्य, टिमटिमाते तारे रिमझिम-रिमझिम वर्षा, कलकल करती नदियाँ, उँचे पर्वत। **धियो यो न:** हम उसके ध्यान में डूबें। **प्रचोदयात्** अपने जीवन की जो मैंने उस प्रभु की हाथ में सौंप दी है।

कृष्ण मोहन गोयल
113-बाजार कोट अमारोहा-244221

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 02/03-08-2017

सी.एल.अग्रवाल डी.ए.वी. चण्डीगढ़ में सामूहिक यज्ञ और वन महोत्सव

सी.एल. अग्रवाल डी.ए.वी. मॉडल स्कूल सेक्टर–7 बी चण्डीगढ़ के प्रांगण में ग्रीष्मावकाश के बाद सामूहिक 'यज्ञ' व वन महोत्सव सप्ताह बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। इस सप्ताह विविध गतिविधियों का आयोजन किया गया। सप्ताह का शुभारम्भ प्रातः विद्यालय की प्राचार्य श्रीमती सुनीता रनियाल जी, शिक्षकगण, विद्यार्थीगण व समस्त कर्मचारियों ने मिलकर 'यज्ञ' भी किया। प्राचार्या महोदया ने अपनी ओजस्वी वाणी से सबका उत्साहवर्धन किया। बच्चों को शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी रहने के लिए गायत्री मंत्र के उच्चारण का महत्व बताया। बस ड्राइवर, कंडक्टर, सफाई कर्मचारी सबको शुभकामनाएँ देते हुए कहा कि बच्चों को सुरक्षित लाने में उनका महत्वपूर्ण योगदान है, साथ ही विद्यालय के उज्ज्वल भविष्य की कामना की। विद्यालय के पुरोहित श्री रामफुल शास्त्री जी ने अपने प्रवचन में बताया की 'यज्ञ' से श्रेष्ठ कोई कार्य नहीं है। हवन सामग्री की सुगंधि से समस्त वातावरण पावन हो जाता है।

प्राचार्या जी ने सभी बच्चों को 'वनमहोत्सव सप्ताह' में बढ़–चढ़कर भाग लेने के लिए प्रेरित किया। बच्चों ने परिसर में औषधीय पौधे लगाए, 'मैंगो मेला' में सभी विद्यार्थियों और उनके पारिवारिक सदस्यों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। विद्यार्थियों ने 'आम' की विभिन्न किस्मों की प्रदर्शनी लगाई। बच्चों ने विभिन्न गतिविधियों भाषण प्रतियोगिता, कविता गायन, नृत्य प्रतियोगिता में भी भाग लिया। कार्य शांति पाठ के साथ सम्पूर्ण हुआ।

एच.एम.वी. जालन्धर की छात्राओं का धर्म शिक्षा की प्रतियोगिता में शानदार परिणाम

हंसराज महिला महाविद्यालय में कॉलेज प्राचार्या डॉ. श्रीमती अजय सरीन के योग्य नेतृत्व में जनवरी, 2017 में आर्य विद्या सभा, नई दिल्ली द्वारा आयोजित अखिल भारतीय धर्म शिक्षा प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें कुल 150 छात्राओं ने शानदार प्रदर्शन देते हुए प्रतिभागिता दी एवं कॉलेज को गौरान्वित करते हुए कु. रीतिका, एस.एस.सी. भाग प्रथम ने 91/100 अंक प्राप्त करके प्रथम स्थान एवं कु. कनिका, एस.एस.सी. भाग द्वितीय ने 90/100, कु. दीक्षा, बीए भाग प्रथम ने 87/100, कु. रीमा रानी ने बीए तृतीय वर्ष ने 89/100 और कु. गुरनीत कौर ने एम.ए. प्रथम वर्ष ने 86/100 अंक प्राप्त करके द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

कॉलेज प्राचार्या ने विजयी छात्राओं को बधाई देते हुए शुभकामनाएँ दीं एवं भविष्य में ऐसी प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। संपूर्ण प्रतियोगिता परीक्षा धर्म शिक्षा इंचार्ज श्रीमती सुनीता धवन, विभागाध्यक्षा संस्कृत विभाग की अध्यक्षता में सम्पन्न की गई और उन्होंने भी छात्राओं को बधाई देते हुए प्रोत्साहित किया।

सी.एफ. डी.ए.वी. गड़ेपान (राज.) में सड़क सुरक्षा जागरूकता कार्यक्रम सम्पन्न

सीएफ डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल में सड़क सुरक्षा जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के दौरान विभिन्न गतिविधियों का आयोजन किया गया।

बालकों के लिए यातायात चिन्हों पर आधारित चित्रकला प्रतियोगिता रखी गई तथा यातायात सुरक्षा पर भी स्लोग्न लेखन हुआ। प्रार्थना सभा के कार्यक्रम में विद्यार्थियों को प्रतिदिन सड़क सुरक्षा से संबंधित ज्ञानवर्धक जानकारियाँ दी गईं। जिसमें सड़क सुरक्षा की महत्ता पर शिक्षक वार्ता, कविता पाठ, विचार अभिव्यक्ति, सामान्य यातायात नियमों पर प्रश्नोत्तरी, तथा लघु नाटक आदि कार्यक्रमों का मंचन किया गया। लोगो को सड़क सुरक्षा के प्रति जागरूक करने हेतु सीएफसीएल कॉलोनी में रैली का आयोजन किया गया।

रैली में बालकों का जोश तथा उनके लगाए जा रहे नारों के द्वारा कॉलोनी के लोगों से सड़क सुरक्षा संबंधी की जा रही अपील की सभी अभिभावकों ने भूरि–भूरि प्रशंसा की। विद्यार्थियों ने सभी गतिविधियों में पूरे उत्साह से भाग लिया। यह कार्यक्रम लोगों में यातायात के नियमों और सुरक्षा के प्रति जागरूकता पैदा करने में सहायक रहा। निश्चित ही विद्यालय का यह प्रयास लोगों को भविष्य में जिम्मेदार नागरिक बनने में मदद करेगा।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**